सर्वसाधारण के बोल चाल की नागरी भाषा के पद्यों में सार तत्त्व (निज स्वरूप,आत्मधन) का परिचय कराने वाला यह बीजक ग्रन्थ ही सर्व प्रथम है जैसे—"बीजक बतावे वित्त को, जो वित गुप्ता होय।" आत्मधन अत्यन्त सन्निकट (अपना स्वरूप) होते हुए अज्ञान और प्रपच के कारण गुप्त हो गया है,उसे लखाने में यह ग्रन्थ शिला-लेख के समान है अतएव जिज्ञासुओं को यह ग्रन्थ पारखी सन्तों द्वारा अवश्य पढ़ना चाहिये, अन्यथा सार शब्द बिना जाना धृक है।

सद्गुरु कबीर साहेब का परिचय कराना मानो सूर्य को दीपक से देखाना है। आप तत्ववेत्ता, सर्व मत मतान्तरों के मर्मज्ञ, सदाचार और शान्ति के स्थापन कर्ता थे। परम सन्त और स्पष्ट वक्ता कबीर साहेब के अगाध ज्ञान और गुणों की प्रशसा परिमित शब्दों में मुझ जैसे अल्पज्ञ से कदापि नहीं हो सकती।

आपने अपना सारा जीवन सनातन मानव धर्म के प्रचार और देशोपकार में लगाया है और आपने हिन्दू मुसलमान और अनेक संप्रदायों के पारस्परिक विरोध मिटाने के निमित्त उपदेश करने में अविश्रान्त परिश्रम किया है जैसे—'भाइरे दुइ जगदीश कहाँ ते आया, कहु कवने बौराया" [देखिये शब्द ३०] इस बीजक ग्रन्थ का प्रत्येक शब्द और पद एकता, राष्ट्रीयता, आत्मीयता के भावों से भरा है जैसे—" हिन्दू तुरुक की एक राह है,सद्गुरु सोइ लखाई" "हिन्दू तुरुक कहां ते आया,किन यह राह चलाई" तथा ' भूले गर्व भुलो मति कोई,हिन्दू तुरुक भूठ कुल दोई" और "कहहिं कबीर राम रमि रहियो हिन्दू तुरुक न कोई" केवल जाति से कोई बड़ा नहीं हो सकता, बरन् गुण, धर्मों के अनुसार बड़ा हो सकता है जैसे—"गुप्त प्रगट है एकै दूधा। काको कहिये ब्राह्मण शूद्रा" "एक बूँद से सृष्टि रची है, को ब्राह्मण को शूद्रा" अछूतोद्धार पर जैसे—"एकै पाट सकल बैठाये, छूति लेत धौं काको" आपने हिन्दू और मुसलमान दोनों को त्रुटियों

पर कड़ी आलोचना की है "वे खसी वे गाय कटावें बादहिं जन्म गँवाया" और 'गाय वधे ते तुरुक कहिये इनते वे क्या छोटे' सब जीवों पर दया रखना जो मूल धर्म है दोनों ने छोड़ दिया जैसे—"हिन्दू की दया मेहर तुरुकन की, दोनों घट सों त्यागी" "वे हलाल वे झटका मारें आग दुनों घर लागी" पढ़ लिख कर भी असली राम और खुदा को नहीं पहचाना जैसे—" पंडित वेद पुरान पढ़ें सब, मुसलमान कुराना। कहहिं कबीर दोउ गये नर्क में, जिन हरदम रामहिं ना जाना" झूठी भक्ति और अन्ध विश्वास पर आपके विचार जैसे—"कबिरन भक्ति बिगारिया, कंकर पत्थर धोय" तथा "माटी के करि देवी देवा, काटि २ जिव देइया जी" और केतनों मनावो पाँव परि, केतनों मनावो रोय। हिन्दू पूजै देवता, तुरुक न काहू होय" इत्यादि।

इस ग्रन्थ का मुख्य विषय जिज्ञासुओं को ज्ञान प्राप्त कराकर सम्पूर्ण बन्धनों से जीते जी मुक्त कराना है जैसे—"बन्दे करिले आपु निवेरा। आपु जियत लखु आपु ठौर करु, मुये कहाँ घर तेरा" इसी कारण " यना बनाया मानवा, विना बुद्धि वे तूल" आदि पदों से अज्ञानियों को ज्ञान प्राप्ति के निमित्त सच्चे गुरु करने की आवश्यकता बतलाते हुए कहा है जैसे—"ताकी पूरी क्यों परे, जाके गुरु न लखाई बाट" अथवा जाको सद्गुरु न मिला, व्याकुल दहुँ दिशि धाय" इस प्रकार पारखी सन्तों की संगति से प्राणी अपने स्वरूप में स्थिर हो जाता है जैसे—"साधु सगति खोजि देखहु, बहुरि उलटि समाय" और अंत में जोर देकर कहते हैं कि "करे खोज कबहुँ न भुलाई" सन्तों की शरण में अपने पद (निज स्वरूप) का खोज करते रहने से मनुष्य कभी भ्रम में नहीं पड़ता। साहेब कहते हैं, मूल वस्तु तो तुम्हारे पास ही है भटकने की आवश्यकता नहीं जैसे-"जेहि खोजत कल्पों गया, घटहिं माहिं सो मूर" और "इच्छा आदि सम्पति पासा"

अहंकार का पर्दा सबको उससे अलग कर दिया है जैसे—"चाही गर्व गुमान ते, ताते परि गइ दूर" सम्पूर्ण आशाओं को त्याग कर निज स्वरुप में स्थिर हो जाओ—"छाडि विन रहहु मेटि सब आशा" और "जो तू चाहै मुझको, छाँड़ सकल की आस, मुझही ऐसा हो रहो सब सुख तेरे पास" सब आशा आसा के त्याग से गुरु पद की प्राप्ति होती है।

सद्गुरु कबीर साहिब के प्रादुर्भाव होने के स्थान लहरतारा "श्री बीजक विद्यालय" का अध्यापक महाराज राघवदासजी द्वारा अक्षर वाक्यादि गत त्रुटियों को शुद्ध कराके यह ग्रन्थ (बीजकमूल) को मैंने छापा है। यह सौभाग्य प्राप्त होना और निर्विघ्न कार्य सफल समाप्त हो जाना इत्यादि सब सद्गुरु कबीर ही की परम कृपा का फल है। अतएव यह ग्रन्थ रूप भेंट उनही करुणा निधि सद्गुरु कबीर साहिब के चरण कमलों में सादर समर्पण करता हूँ।

॥ इति शम् ॥

शुद्ध तिथि—
सद्गुरु कबीर जयन्त्युत्सव,
ज्येष्ठ पूर्णिमा
सम्वत् १९९२ वि०।

विनम्र सेवकः—
बैजनाथ प्रसाद
बुकसेलर, काशी।

बीजक माहात्म्य तथा पाठ-फल ।

—:※※※※:—

※ साखी ※

बीजक कहिये साख धन, धन का कहै सँदेश ।
आतम धन जिहि ठौर है, वचन कबीर उपदेश ॥१॥
देखे बीजक हाथ ले, पावे धन तिहि शोध ।
याते बीजक नाम भौ, माया मनको बोध ॥२॥
आस्ति आत्मा राम है, मन माया कृत नास्ति ।
याकी पारख लहे यथा, बीजकै गुरुमुख आस्ति ॥३॥
पढ़ै गुनै अति प्रीति युत, ठहरिके करै विचार ।
थिरता बुधि पावे सही, वचन कबीर निरधार॥४॥
सार शब्द टकसार है, बीजक याको नाम ।
गुरुकी दया से परख भई, वचन कबीर तमाम ॥५॥
पारख बिनु परचै नहीं, बिन सतसंग न जान ।
दुविधा तजि निर्भय रहे, सोई सन्त सुजान ॥६॥

नीर क्षीर निर्णय करे, हंस लक्ष सहि दान।
दया रूप थिर पद रहे, सो पारख पहिचान॥७॥
देहमान अभिमान के, निर हंकारी होय।
वर्ण कर्म कुल जाति ते, हंस निन्यारा होय ॥८॥
जग विलास है देह को, साधो करो विचार।
सेवा साधन मन कर्म ते, यथा भक्ति उरधार ॥९॥

❀ इति बीजक फल सम्पूर्ण ❀

—:❀❀❀❀:—

* सद्गुरवे नमः *

अथ सद्गुरु साहिब का मुख्य ग्रन्थ ।

बीजक मूल ।

॥ प्रथम प्रकरण ॥

रमैनी ॥ १ ॥

अन्तर ज्योति शब्द एक नारी ॥ हरि ब्रह्मा ताके त्रिपुरारी ॥ ते तिरिये भग लिंग अनन्ता । तेउ न जाने आदिउ अंता ॥ बाखरि एक विधाते कीन्हा चौदह ठहर पाट सो लीन्हा ॥ हरि हर ब्रह्मा महंतो नाऊँ । तिन्ह पुनि तीन बसावल गाऊँ ॥ तिन्ह पुनि रचल खंड ब्रह्मंडा । छौ दर्शन छानवे पाखंडा ॥ पेट न काहू वेद पढ़ाया । सुन्नति कराय तुरुक नहिं आया ॥ नारी मों चित गर्भ प्रसूती । स्वांग धरे बहुतै करतूती ॥ तहिया हम तुम एकै लोहू । एकै प्राण बियापै मोहू ॥ एकै जना जना

संसारा । कौन ज्ञान ते भयउ निनारा ॥ भौ बालक भगद्वारे आया । भग भोगी के पुरुष कहाया ॥ अविगति की गति काहु न जानी ॥ एक जीव कित कहूँ बखानी ॥ जो मुख होय जीभ दस लाखा । तो कोइ आय महंतो भाखा ॥

साखी—कहहिं कबीर पुकारि कै, ई ऊले व्योहार ।
राम नाम जाने बिना, बूड़ि मुवा संसार ॥ १ ॥

रमैनी ॥ २ ॥

जीवरूप एक अंतर बासा । अंतर ज्योति कीन्ह परकासा ॥ इच्छारूपि नारि अवतरी तासु नाम गायत्री धरी ॥ तेहि नारि के पुत्र तीनि भयऊ । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर नाऊँ ॥ फिर ब्रह्में पूछल महतारी । को तोर पुरुष केकरि तुम नारी ॥ तुम हम, हम तुम और न कोई । तुमही पुरुष हमहिं तव जोई ।

साखी—बाप पूत की एकै नारी, एकै माय बियाय ।
ऐसा पूत सपूत न देखा, जो बापहिं चीन्है धाय ॥ २ ॥

रमैनी ॥ ३ ॥

प्रथम आरंभ कौनको भयऊ । दूसर प्रगट कीन्ह सो ठयऊ ॥ प्रगटे ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ती । प्रथमें भक्ति कीन्ह जिव उक्ती ॥ प्रगटे पवन पानी औ छाया । बहु विस्तार के प्रगटी माया ॥ प्रगटे अंड पिंड ब्रह्मंडा । पृथ्वी प्रगट कीन्ह नौ खंडा ॥ प्रगटे सिद्ध साधक सन्यासी । ई सब लागि रहे अविनासी ॥ प्रगटे सुरनर मुनि सब झारी । तेहिके खोजपरे सब हारी ॥

साखी—जीव शीव सब प्रगटे, वै ठाकुर सब दास ।
कबीर और जाने नहीं, (एक) राम नाम की आस ॥३॥

रमैनी ॥ ४ ॥

प्रथम चरण गुरु कीन्ह विचारा । कर्ता गावे सिरजन हारा ॥ कर्मै कैके जग बौराया । सक्त भक्ति कै बांधेनि माया ॥ अद्भुत रूप जातिकी बानी । उपजी प्रीति रमैनी ठानी ॥ गुणी अनगुणी अर्थ नहिं आया । बहुतक जने चीन्हि नहिं पाया ॥

जो चीन्हें ताको निर्मल अंगा। अनचीन्हें नर भयो पतंगा ॥

साखी—चीन्हि चीन्हि का गावहु वौरे,वानी परी न चीन्ह।
आदि अन्त उतपति प्रलय, आपूहीं कहि दीन्ह ॥ ४ ॥

रमैनी ॥ ५ ॥

कहाँलो कहों युगनकी बाता। भूले ब्रह्म न चीन्हें बाटा ॥ हरिहर ब्रह्माके मनभाई। विवि अत्तर लै युक्ति बनाई। विवि अत्तर का कीन्ह बँधाना। अनहद शब्द ज्योति परमाना ॥ अत्तर पढ़ि गुनि राह चलाई। सनक सनन्दन के मनभाई ॥ वेद किताब कीन्ह विस्तारा। फैल गैल मन अगम अपारा ॥ चहुँ युग भक्तन बांधल बाटी। समुझि न परी मोटरी फाटी ॥ भय भय पृथ्वी दहुँ दिश धावे। अस्थिरहोय न औषध पावै ॥ होय विहिस्त जो चित न डोलावे। खसमहिं छाँड़ि दोजख को धावे ॥ पूरव दिशा हंस गतिहोई। है समीप संधि बूझै कोई ॥ भक्ता भक्तिक कीन्ह सिंगारा। छूड़ि गयल सब मांझल धारा ॥

साखी–बिन गुरु ज्ञान दुन्द भई, खसम कही मिलि बात।
युग युग सो कहवैया, काहु न मानी बात ॥ ५ ॥

रमैनी ॥ ६ ॥

वर्णहु कौन रूप औ रेखा। दूसर कौन आहि जो देखा ॥ वो ॐकार आदि नहिं वेदा। ताकर कहहु कौन कुलभेदा ॥ नहिं तारागन नहिं रवि चंदा। नहिं कछु होत पिताके बिंदा ॥ नहिं जल नहिं थल नहिं थिर पवना। को धरे नाम हुकुम को बरना ॥ नहिं कछुहोत दिवस निशु राती। ताकर कहहु कौन कुल जाती ॥

साखी–शून्यसहज मन सुमिरते, प्रगट भई एक ज्योत।
ताहि पुरुष की मैं बलिहारी, निरालंब जो होत ॥ ६ ॥

रमैनी ॥ ७ ॥

तहिया होते पवन नहिं पानी। तहिया सृष्टि कौन उत्पानी। तहिया होते कली नहिं फूला। तहिया होते गर्भ नहिं मूला ॥ तहिया होते विद्या नहिं वेदा। तहिया होते शब्द नहिं स्वाद ॥

तहिया होते पिंड नहिं वासू। नहिंधरधरणि न पवन अकासू। तहिया होते गुरु नहिं चेला। गम्य अगम्य न पंथ दुहेला॥

साखी–अविगति की गति का कहो, जाके गाँव न ठाँव।
गुण विहूना पेखना, का कहि लीजे नाँव॥ ७॥

रमैनी॥ ८॥

तत्वमसी इनके उपदेसा। ई उपनिषद कहैं संदेसा॥ ई निश्चय इनके बड़भारी। वाहिक वर्णन करें अधिकारी॥ परम तत्वका निज परमाना। सनकादिक नारद शुक माना॥ याज्ञवल्क्य औ जनक सम्वादा। दतात्रेय वाहि रस स्वादा॥ वाहि वात राम वसिष्ठ मिलिगाई। वाहि वात कृष्ण उद्धव समुझाई॥ वाहि वात जो जनक दृढ़ाई। देह धरे विदेह कहाई॥

साखी–कुल मर्य्यादा खोय के, जीवत मुवा न होय।
देखत जो नहिं देखिया, अदृष्ट कहावे सोय॥ ८॥

रमैनी॥ ९॥

बाँधे अष्ट कष्ट नौ सूता। यमबांधे अञ्जनी के

पूता ॥ यमके वाहन वांधे जनी । वाँधे भृष्टि कहां लौं गनी ॥ वँधेउ देव तेंतीस करोरी । सुमिरत लोहबंद गौ तोरी ॥ राजा संवरे तुरिया चढ़ी । पंथी सबरे नामले वढ़ी ॥ अर्थ विहूना संवरे नारी। परजा संवरे पुहुमी भारी ॥

साखी-वंदि मनावे फल ते पावे, वंदि दिया सो देय ।
कहे कबीर सो ऊवरे, जो निशिवासर नामहिं लेय ॥ ९ ॥

रमैनी ॥ १० ॥

रहि लै पीपराही वही। करगी आवत काहु न कही ॥ आई करगी भौ अजगूता । जन्म जन्म यम पहिरे बूता ॥ बूता पहिरि यम कीन्ह समाना । तीन लोक में कीन्ह पयाना ॥ वांधेउ ब्रह्मा विष्णु महेशू । सुर नर मुनि औ वांधु गणेशू ॥ बांधे पवन पावक औ नीरू । चांद सूर्य वांधेउ दोउ वीरू ॥ सांच मंत्र वाँधे सब भारी । अमृत वस्तु न जानै नारी ॥

सहज विचारे मूल गमाई लाभते हानि होयरे भाई ॥ ओछी मति चन्द्रमा गौ अर्थई । त्रिकुटी संगम स्वामी वसई ॥ तवही विष्णु कहा समुझाई । मैथुन अष्ट तुम जीतहु जाई ॥ तब सनकादिक तत्व बिचारा । ज्यों धन पावहिं रंक अपारा ॥ भौ मर्य्याद बहुत सुख लागा । यहि लेखे सब संशय भागा ॥ देखत उत्पति लागु न वारा । एक मरै एक करै बिचारा । मुये गये की काहु न कही । झूँठी आस लागि जग रही ॥

साखी–जरत जरतते बांचहू, काहु न कीन्ह गोहार ।
विषविषया के खायहू, राति दिवस मिलि झार ॥ १३ ॥

रमैनी ॥ १४ ॥

बड़ सो पापी आहि गुमानी । पाखंडरूप छलेउ नरजानी ॥ वावन रूप छलेउ बलि राजा । ब्राह्मण कीन्ह कौन को काजा ॥ ब्राह्मणही सब कीन्ही चोरी । ब्राह्मणही को लागल खोरी ॥ ब्राह्मण कीन्हो वेद पुराना ।

कैसहु के मोहिं मानुष जाना ॥ एकसे ब्रह्म पंथ चलाया। एकसे हंस गोपालहिं गाया ॥ एकसे शम्भू पंथ चलाया ॥ एकसे भूत प्रेत मन लाया ॥ एकसे पूजा जैनि विचारा। एकसे निहुरि निमाज गुजारा ॥ कोइ काहुका हटा न माना। झूठा खसम कबीर न जाना ॥ तन मन भजिं रहु मेरे भक्ता। सत्य कबीर सत्य है वक्ता ॥ आपुहि देव आपुहे पाँती। आपुही कुल आपुहें जाती ॥ सर्वभूत संसार निवासी आपुहि खसम आपु सुखवासी ॥ कहइत मोहि भयल युगचारी। काके आगे कहौं पुकारी ॥

साखी—साँचहिं कोई न माने, झूठहि के सँग जाय।
झूठहि झूठा मिलि रहा, अहमक खेहा खाय ॥ १४ ॥

रमैनी ॥ १५ ॥

बोनई बदरिया परिगौ सन्झा। अगुवा भूला बन खँड मंझा ॥ पिया अंते धनि अंते रहई। चौपरि कामरि माथे गहई ॥

साखी अमृत वस्तु जाने नहीं, मगन भया सब लोय ।
कहहिं कबीर कामों नहीं, जीवहिं मरण न होय ॥ १० ॥

रमैनी ॥ ११ ॥

आंधरि गुष्टि सृष्टि भइ बौरी । तीन लोक में लागि ठगोरी । ब्रह्मा ठगो नाग कहँ जाई । देवता सहित ठगो त्रिपुराई ॥ राज ठगोरी विष्णु पर परी । चौदह भुवन केर चौधरी ॥ आदि अन्त जाकी जलक न जानी । ताकी डर तुम काहेक मानी ॥ वै उतंग तुम जाति पतंगा । यम घर कियेउ जीव को संगा ॥ नीम कीट जस नीम पियारा । विषको अमृत कहत गँवारा ॥ विषके संग कौन गुण होई । किंचित लाभ मूल गौ खोई ॥ विष अमृत गौ एकै सानी । जिन जानी तिन विषकै मानी ॥ काह भये नर शुद्ध विशुद्धा । बिन परचय जगबूड़ न बुद्धा ॥ मतिके हीन कौन गुण कहई । लालच लागी आसा रहई ॥

साखी-मूरा है मरि जाहुगे, मुये कि बाजी ढोल ।
सपन सनेही जग भया, सहिदानी रँहिगौ बोल ॥ ११ ॥

रमैनी ॥ १२ ॥

माटिक कोट पषान को ताला। सोईक वन सोई रखवाला ॥ सो वन देखत जीव डेराना । ब्राह्मण वैष्णव एकै जाना ॥ ज्यों किसान किसानी करई। उपजे खेत बीज नहिं परई ॥ छाड़ि देहु नर झेलिक झेला । बूड़े दोऊ गुरु औ चेला ॥ तीसर बूड़े पारथ भाई । जिनवन डाह्योदवा लगाई ॥ भूँकि भूँकि कूकुर मरि गयऊ । काज न एक सियार से भयऊ ॥

साखी—मूस विलाई एक संग, कहु कैसे रहि जाय।
अचरज एक देखो हो संतो, हस्ती सिंघहि खाय ॥१२॥

रमैनी ॥ १३ ॥

नहीं परतीत जो यह संसारा । दर्व की चोट कठिन कै मारा ॥ सोतो शेषौ जाइ लुकाई । काहूके परतीत न आई ॥ चले लोग सब मूल गमाई ॥ यमकी वाडि काटि नहिं जाई आजु काज जो काल अकाजा। चले लादि दिगंतर राजा।

साखी—फुलवा भार न ले सके, कहे सखिन सों रोय।
ज्यों ज्यों भीजे कामरी, त्यों त्यों भारी होय॥ १५॥

रमैनी॥ १६॥

चलत चलत अति चरण पिराना। हारि परे तहँ अतिरे सयाना॥ गण गंधर्व मुनि अंतन पाया। हरि अलोप जग धंधे लाया॥ गहनी बंधन बाण न सूझा। थाकि परे तहां किछउ न बूझा। भूलि परे जिय अधिक डेराई। रजनी अंध कूप है आई॥ माया मोह उहाँ भरपूरी। दादुर दामिनि पवन अपूरी॥ बरसै तपै अखंडित धारा॥ रैनि भयावनि कछु न अधारा॥

साखी—सबै लोग जहँडाइया, अन्धा सबै भुलान।
कहा कोई ना माने, [सन] एकै माहिं समान॥ १६॥

रमैनी॥ १७॥

जस जिव आपु मिलै अस कोई। बहुत धर्म सुख हृदया होई॥ जासु बात रामकी कही। प्रीति न काहू सो निर्वही॥ एकै भाव सकल जग देखी। बाहर परे सो होय विवेकी॥

वेपथ मोहके फन्द छुड़ाई । तहां जाय जहां
घाट कसाई ॥ अहै कसाई छूरी हाथा । कैसहु
आवे काटौं माथा ॥ मानुप बड़ा बड़ा होय
आया । एकै पंडित सबै पढ़ाया ॥ पढ़ना पढ़ो घरो
जनि गोई । नहिं तो निश्चय जाहु बिगोई ॥

साखी—सुमिरण करहु राम का, छाँड़हु दुख की आस ।
तर ऊपर धै चापि हैं, [जस] कोल्ह कोटि पिचास॥१७॥

रमैनी ॥ १८ ॥

अदबुद पंथ बर्णि नहिं जाई । भूले राम भूलि
दुनियाई । जो चेतहु तो चेतहुरे भाई । नहिं तो
जीव यम ल जाई ॥ शब्द न माने कथै विज्ञाना ।
ताते यम दियो है थाना ॥ संशय सावज बसे
शरीरा । तिन खायो अन बेधा हीरा ॥

साखी—संशय सावज शरीर में, संगहि खेले जुआरि ।
ऐसा घायल बापुरा, जीवहि मारे झारि ॥ १८ ॥

रमैनी ॥ १९ ॥

अनहद अनुभवके करिआसा । ई विप्रीति
देखहु तमासा ॥ इहै तमासा देखहुरे भाई । जहँवा

शून्य तहाँ चलि जाई ॥ शून्यहि बंधे शून्यहि गयऊ। हाथ छोड़ि बेहाथा भयऊ ॥ संशय सावज सकल सँसारा। काल अहेरी सांझ सकारा ॥

साखी—सुमिरण करहू रामका काल गहे है केश।
न जानो कब मारि हैं। क्या घर क्या परदेश ॥ १९ ॥

रमैनी ॥ २० ॥

अब कहु रामनाम अबिनाशी। हरि छोड़ि जियरा कतहुँ न जासी ॥ जहाँ जाहु तहां होहु पतंगा। अब जनि जरहु समुझि बिष सङ्गा ॥ रामनाम लौलायसु लीन्हा। भृंगी कीट समुझि मन दीन्हा ॥ भौ अस गरुवा दुखके भारी। करु जिय जतन जो देखु बिचारी ॥ मनकी बात है लहरि विकारा। तेनहिं सूझै वार न पारा ॥

साखी—इच्छा करि भवसागर, [जामें] बोहित रामअधार ॥
कहैं कबीर हरि सरण गहु, गौ खुर बच्छ विस्तार ॥२०॥

रमैनी ॥ २१ ॥

बहुत दुःख दुख दुखकी खानी। तब बचिहो जब रामहिं जानी ॥ रामहि जानि युक्ति जो चलई।

युक्तिहुते फंदा नहिं परई ॥ युक्तिहि युक्त चला संसारा । निश्चय कहा न मानु हमारा ॥ कनक कामिनी घोर पटोरा । संपति वहुत रहे दिन थोरा॥ थोरी संपति गो बौराई। धर्मरायकी खबरि न पाई॥देखि त्रास मुख गो कुम्हिलाई। अमृत धोखे गो विष खाई॥

साखी—मैं सिरजों मैं मारों, मैं जारों मैं खांव।
जल थल मैंही रमि रहो, मोर निरंजन नांव ॥ २१ ॥

रमैनी ॥ २२ ॥

अलख निरंजन लखे न कोई। जेहि बंधे बंधा सब लोई॥ जेहि झूठे सब बांधु अयाना। झूठा वचन सांच कै माना॥ धंधा बंधा कीन्ह व्यवहारा। कर्म विवर्जित बसै निन्यारा॥ षट्र आश्रम षट्र दर्शन कीन्हा। पटरस बास पटै वस्तु चीन्हा। चारि वृत्त छौ शाख बखानी। विद्या अगणित गनै न जानी॥ औरो आगम करे बिचारा। ते नहिं सूझै वार न पारा॥ जप तीरथ व्रत कीजै पूजा। दान पुण्य कीजै बहु दूजा॥

साखी—मंदिर तो है नेह का, मति कोइ पैठो धाय।
जो कोइ पैठे धाय के, बिन सिर सेती जाय ॥ २२ ॥

रमनी ॥ २३ ॥

अल्प सुख दुख आदिउ अंता। मन भुलान मेगर मैमंता ॥ सुख बिसराय मुक्ति कहाँ पावे। परिहरि साँच झूठ निजधावे ॥ अनल ज्योति डाहैं एक संगा। नैन नेह जस जैरे पतंगा ॥ करहु विचार जो सब दुख जाई। परिहरि झूठा केर सगाई ॥ लालच लागी जन्म सिराई। जरा मरन नियरायल आई ॥

साखी—भरमरा बाँधा ई जग, यहिविधि आवैजाय ॥
मानुष जन्महि पाय नर, काहेको जहँडाय ॥ २३ ॥

॥ रमनी ॥ २४ ॥

चंद्रचकोर अस बात जनाई ॥ मानुप बुद्धि दीन्ह पलटाई ॥ चारि अवस्था सपनेहु कहई। झुठो फूरो जानत रहई ॥ मिथ्या बात न जाने कोई। यहि विधि सब गेल बिगोई ॥ आगे देदे सबन गमाया॥

मानुष बुद्धि सपनेहु नहिं पाया ॥ चौंतिस अक्षर से निकले जोई । पाप पुण्य जानेगा सोई ॥

साखी—सोई कहंता सोइ होउगे, निकरि न बाहिर आव ।
हो हजूर ठाढ़ कहतहो, (तैंक्यों) धोखे जन्म गमाव ॥२४॥

॥ रमैनी ॥ २५ ॥

चौंतिस अक्षरका इहै विशेषा । सहस्रों नाम यहि में देखा ॥ भूलि भटकि नर फिर घट आया । होत अजान सो सब न गमाया ॥ खोजहिं ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ती । अनंत लोक खोजहिं बहु भक्ती ॥ खोजहिं गणगंधर्व मुनि देवा । अनंत लोक खोजहिं बहु भेवा ॥

साखी—जती सती सब खोजहिं, मनहिं न माने हारि ।
बड बड जीवन बांचिहे, कहहिं कबीर पुकारि ॥ २५ ॥

॥ रमैनी ॥ २६ ॥

आपुहि कर्ता भये कुलाला । बहु बिधि वासन गढ़े कुम्हारा ॥ विधिने सबै कीन्ह एक ठाऊँ । अनेक जतन के बने कनाऊँ ॥ जठर अग्नि मों दीन्ह

प्रजाली । तामहँ आपु भये प्रति पाली ॥ बहुत जतन कै बाहर आया । तब शिव शक्ती नाम धराया । घरका सुत जों होय अयाना । ताके संग न जाहु सयाना ॥ सांची बात कही मैं अपनी । भया दिवाना और की पूनी ॥ गुप्त प्रगट है एकै दूधा । काको कहिए ब्राह्मण शूद्रा ॥ झूठे गर्भ भूलो मति कोई । हिंदू तुरुक झूठ कुल दोई ॥

साखी–जिन यह चित्र बनाइया, साँचासो सूत्रधारि ।
कहहिं कवीर ते जन भले,(जो) चित्रवंतहि लेहि निहारि॥

॥ रमैनी ॥ २७ ॥

ब्रह्मा को दीन्हो ब्रह्मांडा । सप्त द्वीप पुहुमी नौ-खंडा ॥ सत्य सत्य कहि विष्णु दृढ़ाई। तीन लोकमो राखिन जाई ॥ लिंग रूप तब शंकर कीन्हा । धरती कीलि रसातल दीन्हा ॥ तब अष्टंगी रची कुमारी । तीनि लोक मोहा सब झारी॥ दुतिया नाम पार्वती को भयऊ । तपकर्त्ता शंकर कहँ दियऊ॥ एकै पुरुष एक है नारी । ताते रची खानि भो चारी ॥ सर्वन

वर्मन देव औ दासा । रज सत तम गुण धरति अकासा ॥

साखी—एक अण्ड ओंकारते । सब जग भया पसार ।
कहहिं कबीर सब नारि राम की । अविचल पुरुष भतार ॥

रमैनी ॥ २८ ॥

अस जोलहा काहु मर्म न जाना जिन्ह जग आनि पसारिनि ताना ॥ धरती अकाश दोउ गाड़ खंदाया । चाँद सूर्य दोउ नरी बनाया ॥ सहस्र तार ले पूरनि पूरी । अजहूँ बिनै कठिन है दूरी ॥ कहहिं कबीर कर्म से जोरी । सूत कुसूत बिनै भल कोरी २८

रमैनी ॥ २९ ॥

वज्रहुते तृण खिन में होई । तृणत वज्र करे पुनि सोई ॥ निझरूनीरू जानि परिहरिया । कर्मक बाँधा लालच करिया ॥ कर्म धर्म मति बुधि परिहरिया । झुठा नाम साँचले धरिया ॥ रज गति त्रिविधि कीन्ह प्रकाशा । कर्म धर्म बुद्धि केर बिनाशा ॥ रविके उदय तारा भौ छीना ॥ चर बीहर दूनों में

लीना ॥ विषके खाये विष नहिं जावे । गारुड़ सो जो मरत जियावे ॥

साखी—श्रलख जो लागी पलक में, पलकहि में डसिजाय ।
विषहर मंत्र न माने, (तो) गारुड़ काह कराय ॥ २९ ॥

रमैनी ॥ ३० ॥

औ भूले षटदर्शन भाई । पाखंड भेष रहा लपटाई ॥ जीव शीव का आहि नसौना । चारिउ वेद चतुर्गुण मौना । जैनिधर्म का मर्म न जाना । पाती तोरि देव घर आना ॥ दवना मरुवा चंपाके फूला । मानहु जीव कोटि सम तूला ॥ औ पृथिवी के रोम उचारे । देखत जन्म आपनो हारे ॥ मन्मथ विंद करे असरारा । कल्पे बिन्द खसे नहिं द्वारा ॥ ताकर हाल होय अघकूचा । छौ दर्शन में जैनि विगूर्चा ॥

साखी—ज्ञान अमरपद बाहिरें । नियरे ते है दूरि ॥
जानेनाके निकट है । रहा सकल घट पूरि ॥ ३० ॥

रमैनी ॥ ३१ ॥

सुमृति आहि गुणन के चीन्हा । पाप पुण्यको मारग कीन्हा । सुमृति वेद पढ़ै असरारा । पाखंड

रूप करे हंकारा ॥ पढे वेद औ करे बड़ाई । संशय गाँठि अजहुँ नहिं जाई ॥ पढ़िके शास्त्र जीव वध करई । मूंडि काटि अगमन के धरई ॥

साखी—कहहि कबीर ई पाखंड, बहुतक जीव सताव ।
अनुभव भाव न दरसै, जियत न आपु लखाव ॥ ३१ ॥

रमैनी ॥ ३२ ॥

अंधसो दर्पण वेद पुराना । दवी कहा महारस जाना ॥ जस खर चंदन लादेउ भारा । परिमल वास न जानु गँवारा ॥ कहहिं कबीर खोजे अस- माना । सो न मिला जो जाय अभिमाना ॥३२॥

रमैनी ॥ ३३ ॥

वदकी पुत्री सुम्रति भाई । सो जेवरि कर लतहि आई ॥ आपुहि वरी आपन गर बंधा । झूठा मोह कालको फंदा ॥ बँधवत बँधा छोरियो न जाई । विषय स्वरूप भूलि दुनियाई ॥ हमरे देखत सकल जग लूटा । दास कबीर राम कहि छूटा ॥

साखी—रामहि राम पुकारते । जिभ्या परिगौ रौस ।
सूधा जल पीवै नहीं । खोदि पिवनकी हौस ॥ ३३ ॥

रमैनी ॥ ३४ ॥

पढ़ि पढ़ि पंडित करु चतुराई । निज मुक्ति मोहि कहो समुझाई ॥ कहँ बसे पुरुष कौनसा गाऊँ । पंड़ित मोहि सुनावहु नाऊँ ॥ चारि वेद ब्रह्मे निज ठाना । मुक्तिका मर्म उनहु नहिं जाना ॥ दान पुण्य उन बहुत बखाना । अपने मरणकी खबरि न जाना ॥ एक नाम है अगम गँभीरा । तहवाँ अस्थिर दास कबीरा ॥

साखी—चिउँटी जहाँ न चढ़ि सके । राई ना ठहराय ॥
आवा गमन की गम नहीं । तहाँ सकलो जग जाय॥३४॥

रमैनी ॥ ३५ ॥

पण्डित भूले पढ़ि गुनि वेदा । आप अपन पौ जानु न भेदा ॥ संझा तर्पण औौर षट कर्मा । ई बहु रूप करें अस धर्मा ॥ गायत्री युग चारि पढ़ाई पूछहु जाय मुक्ति किन पाई ॥ और के छिये लेत हो छींचा । तुमसो कहहु कौन है नीचा ॥ ई गुण गर्भ करो अधिकाई । अधिके गर्भ न होय भलाई ।

जासु नाम है गर्भ प्रहारी । सो कस गर्भहि सके सहारी ॥

साखी–कुल मर्य्यादा खोयके । खोजिन पद निर्वान ॥
अंकुर बीज नसायके । नर भये बिदेही थान ॥ ३५ ॥

रमैनी ॥ ३६ ॥

ज्ञानी चतुर विचच्छन लोई । एक सयान सयान न होई । दूसर सयान को मर्म न जाना । उत्पति परलय रैन बिहाना ॥ बानिज एक सबन मिलि ठाना । नेम धर्म संजम भगवाना । हरि अस ठाकुर तजियो न जाई । बालन बिहिस्त गावहि दुलहाई॥

साखी–ते नर मरिके कहां गये । जिन दीन्हा गुरु छोटि ॥
रामनाम निजुजानिकै । छाडिदेहु बस्तु खोटि ॥३६॥

रमैनी ॥ ३७ ॥

एक सयान सयान न होई । दूसर सयान न जाने कोई ॥ तीसर सयान सयानहिं खाई । चौथे सयान तहाँ ले जाई ॥ पँचये सयान जो जानेउ कोई । छठये मॉ सब गयल बिगोई॥ सतयाँ सयान जो जानहु भाई । लोक वेदमों देउ देखाई ॥

साखी—बीजक बतावे वित्तको । जो वित्त गुप्ता होय ॥
(ऐसे) शब्द बतावे जीवको । बूझै विरला कोय ॥ ३८ ॥

रमैनी ॥ ३८ ॥

यहि विधि कहौं कहा नहिं माना । मारग माहिं पसारिनि ताना राति दिवस मिलि जोरिन तागा। ओटत कातत भरम न भागा । भरमे सब जग रहा समाई । भरम छोड़ि कतहूँ नहिं जाई ॥ परै न पूरि दिनहु दिन छीना तहाँ जाय जहाँ अंग बिहूना ॥ जो मत आदि अंत चलिआई । सो मत सब । उन्ह प्रगट सुनाई ॥

साखी—यह सन्देस फुर मानिके । लीन्हेउ शीश चढ़ाय ॥
संतों है सतोप सुख । रहहु तो हृदय जुड़ाय ॥ ३८ ॥

रमैनी ॥ ३९ ॥

जिन्ह कलमा कलिमाहिं पढ़ाया । कुदरत खोज तिनहु नहिं पाया ॥ कर्मत कर्म करे करतूता ॥ वेद कितेब भये सब रीता ॥ कर्मत सो जग मौ अवत- रिया । कर्मत सो निमाज को धरिया ॥ कर्मते सु- न्नति और जनेऊ । हिन्दू तुरक न जाने भेऊ ॥

साखी–पानी पवन सँजोय के। रचिया यह उत्पात ॥
शून्यहि सुरति समोइके। कासो कहिए जात ॥ ३९ ॥

रमैनी ॥ ४० ॥

आदम आदि सुधि नहीं पाई। मामा हवा कहाँ ते आई ॥ तब नहिं होते तुरुक औ हिन्दू। माय के रुधिर पिता के बिन्दू ॥ तब नहिं होते गाय कसाई। तब बिसमिल्ला किन फुरमाई ॥ तब नहिं होते कुल औ जाती। दोजख बिहिस्त कौनं उतपाती ॥ मन मसले की सुधि नहिं जाना। मतिभुलान दुइ दीन बखाना ॥

साखी–संजोगे का गुणरवै। बिन जोगे गुण जाय।
जिभ्या स्वारथ कारणे। नर कीन्हे बहुत उपाय ॥ ४० ॥

रमैनी ॥ ४१ ॥

अंबुकी रासि समुद्र की खाई। रवि शशि कोटि तैतीसों भाई ॥ भँवर जाल में आसन मांडा। चाहत सुख दुख सङ्ग न छाड़ा ॥ दुखका मर्म न काहू पाया। बहुत भाँति के जग भरमाया ॥

आपुहि बाउर आपु सयाना। हृदया बसे तेहि राम न जाना॥

साखी—तेहि हरी तेहि ठाकुर। तेहि हरी के दास।
ना यम भया न जामिनी। भामिनि चली निरास॥४२॥

रमैनी॥ ४२॥

जब हम रहल रहल नहिं कोई। हमरे माहिं रहल सब कोई॥ कहहु राम कौन तोरि सेवा। सो समुझाय कहो मोहि देवा॥ फुरफुर कहऊँ मारु सब कोई झूठहिं झूठा संगति होई॥ आंधर कहैं सबै हम देखा। तहाँ दिठियार बैठि मुख पेखा॥ यहि विधि कहऊँ मानु जो कोई। जस मुख तस जो हृदया होई॥ कहहि कबीर हँस मुसु काई। हमरे कलह छुटिहो भाई॥

रमैनी॥ ४३॥

जिन्ह जीव कीन्ह आपु विश्वासा। नर्क गये तेहि नर्कहिं वासा॥ आवत जात न लागे वारा। काल अहेरी सांझ सकारा। चौदह विद्या

पढ़ि समुझावै । अपने मरण की खबरि न पावै ॥ जाने जीव को परा अँदेसा । झूठहिं आय के कहा सँदेसा ॥ संगति छाड़ि करै असरारा । उबहे मोट नर्क कर भारा ॥

साखी—गुरु द्रोही औ मन्मुखी । नारी पुरुष विचार ।
ते नर चौरासी भरमि हैं । ज्यों लों चन्द्र दिवाकार ॥४३॥

रमैनी ॥ ४४ ॥

कबहूँ न भयउ संग औ साथा । ऐसेहिं जन्म गमायउ हाथा ॥ बहुरि न पैहो ऐसो थाना । साधु संगति तुम नहिं पहिचाना ॥ अब तो होइ नर्क महँ बासा । निस दिन बसेउ लबार के पासा ॥

साखी—जात सबन कहँ देखिया । कहहिं कबीर पुकार ।
चेतना होय तो चेतिले, (नहिं तो) दिवस परतु है धार॥४४॥

रमैनी ॥ ४५ ॥

हिरणाकुश रावण गौ कंसा । कृष्ण गये सुर नर मुनि वंशा ॥ ब्रह्मा गये मर्म नहिं जाना । बड़ सब गये जे रहल सयाना ॥ समुझि न परलि राम

की कहानी । निर्वक दूध कि सर्वक पानी ॥ रहिगो पंथ थकित भौ पवना । दशों दिशा उजारि भौ गवना ॥ मीन जाल भौ ई संसारा । लोहकी नाव पषाण को भारा ॥ खेवें सबै मर्म हम जानी । तैयो कहें रहे उतरानी ॥

साखी—मछरी मुख जस केंचुआ । मुसवन महँ गिरदान ।
सर्पन मांहि गहे जुआ । जात सबन की जान ॥ ४५ ॥

रमैनी ॥ ४६ ॥

विनसे नाग गरुड़ गलि जाई । विनसे कपटी औ शत भाई ॥ विनसे पाप पुण्य जिन्ह कीन्हा । विनसे गुण निर्गुण जिन्ह चीन्हा ॥ विनसे अग्नि पवन औ पानी । विनसे सृष्टि कहाँलों गनी ॥ विष्णु लोक विनसै छिनमाहीं । हौं देखा परलय की छाँही ॥

साखी—मृच्छरूप माया भई । जवरहिं खेले अहेर ।
हरिहर ब्रह्मा न ऊबरे । सुर नर मुनि केहि केर ॥ ४६ ॥

रमैनी ॥ ४७ ॥

जरासिंधु शिशुपाल सँहारा । सहस्रार्जुन

छलसो मारा ॥ बड़ छल रावण सो गौ वीती । लंका रहल कंचन की भीतीं ॥ दुर्योधन अभिमाने गयऊ । पांडवो केर मर्म नहिं पयऊ ॥ माया के डिंभ गयल सब राजा । उत्तम मध्यम बाजन बाजा ॥ छौ चकवे विति धरणि समाना । एकौ जीव प्रतीति न आना ॥ कहँलो कहों अचेतहि गयऊ । चेत अचेत झगरा एक भयऊ ॥

साखी—ई माया जग मोहिनी । मोहिन सब जग धाय ।
हरिचंद सत्तके कारणे । घर घर सोग बिकाय ॥ ४७ ॥

रमैनी ॥ ४८ ॥

मानिक पुरहिं कवीर बसेरी । मद्दति सुनी शेष तकि केरी ॥ ऊजो सुनी यवन पुर थाना झूसी सुनी पीरन को नामा ॥ एकइस पीर लिखे तेहि ठामा । खतमा पढ़ै पैगम्बर नामा ॥ सुनत बोल मोहिं रहा न जाई । देखि मुकर्बा रहा भुलाई । हवी नवी नवी के कामा । जहँलौं अमल सो सबै हरामा ॥

साखी—शेष अकर्दी शेष सकरदी । मानहु वचन हमार ।
आदि अंत औ युग युग । देखहु दृष्टि पसार ॥ ४८ ॥

रमैनी ॥ ४९ ॥

दरकी बात कहो दरवेसा । बादशाह है कौने भेसा ॥ कहँ कूच कहँ करें मुकामा । मैं तोहिं पूछौं मूसलमाना । कौन सुरति को करों सलामा ॥ लाल जर्दकी नाना बाना । काजी काज करहु तुम कैसा ॥ घर घर जबह करावहु भैंसा । बकरी मुरगी किन्ह फुरमाया । किसके कहे तुम छुरी चलाया ॥ दर्द न जानहु पीर कहावहु । बैता पढ़ि पढ़ि जग भरमावहु ॥ कहहिं कबीर एक सैयद कहावे । आप सरीखा जग कबुलावे ।

साखी—दिनको रहत हैं रोजा । राति हनत हैं गाय ।
यही खून वह बंदगी । क्योंकर खुसी खुदाय ॥ ४९ ॥

रमैनी ॥ ५० ॥

कहइत मोहिं भयल युग चारी । समभत नाहिं मोर सुत नारी ॥ बंस आग लगि वंसहिं जरिया ॥ भरम भूलि नर धंधे परिया । हस्तिनि फंदे

हस्ती रहई । मृगीके फंदे मृगा परई । लोहै लोह जस काटु सयाना । त्रिया के तत्व त्रिया पहिचाना ॥

साखी—नारि रचते पुरुष है । पुरुष रचंते नार ।
पुरुषहि पुरुषा जो रचे । ते विरले संसार ॥ ५० ॥

रमैनी ॥ ५१ ॥

जाकर नाम अकहुवा भाई । ताकर काह रमैनी गाई ॥ कहें तातपर्य एक ऐसा । जस पंथी बोहित चढ़ि बैसा ॥ है कछु रहनि गहनि की बाता । बैठा रहे चला पुनि जाता ॥ रहे वदन नहि स्वांग सुभाऊ ॥ मन अस्थिर नहिं बोले काहू ॥

साखी—तन राता मन जात है । मन राता तन जाय ॥
तन मन एकै ह्वै रहै । (तब) हंस कबीर कहाय ॥ ५१ ॥

रमैनी ॥ ५२ ॥

जिहिं कारण शिव अजहु वियोगी । अंग विभूति लाय भौ योगी ॥ शेष सहस मुख पार न पावे । सो अब खसम सही समुझावे ॥ ऐसी विधि जो मो कहँ ध्यावै । छठये मांह दरस सो पावै ॥ कौनेहु भाव दिखाई देऊँ ॥ गुप्तहिं रहौं सुभाव सब लऊं ॥

साखी—कहहिं कबीर पुकारिके। सबका उहै विचार॥
कहा हमार माने नहीं, किमि छूटै भ्रम जार॥ ५२॥

रमैनी॥ ५३॥

महादेव मुनि अंत न पाया। उमा सहित उन जन्म गमाया॥ उनहूं ते सिध साधक होई। मन निश्चय कहु कैसे कोई॥ जब लग तनमें आहै सोई। तब लग चेति न देखे कोई॥ तब चेतिहो जब तजिहो प्राना। भया अयान तब मन पछताना॥ इतना सुनत निकट चलि आई। मन विकार नहिं छूटै भाई॥

साखी—तीन लोक मुवा कौ आयके। छूटि न काहुकि आस।
एकै अंधरे जग खाया। सबका भया निरास॥ ५३॥

रमैनी॥ ५४॥

मरिगौ ब्रह्मा काशिको वासी। शीव सहित मुये अविनासी॥ मथुरा को मरिगौ कृष्ण गोवारा॥ मरि मरि गये दशो अवतारा॥ मरि मरि गये भक्ति जिन्ह ठानी। सगुण मा निर्गुन जिन्ह ग्यानी॥

साखी—नाथ मछिंद्र बाँचे नहीं। गोरख दत्त औ व्यास।

कहहिं कबीर पुकारि के । सब परे कालकी फांस ॥५४॥

रमैनी ॥ ५५ ॥

गये राम औ गये लछमना । संगन गई सीता ऐसी धना ॥ जात कौरवे लागु न वारा । गये भोज जिन्ह साजल धारा ॥ गये पण्डु कुन्ती ऐसी रानी ॥ गये सहदेव जिन बुधि मति ठानी ॥ सर्व सोने की लंक उठाई । चलन बार कछु संग न लाई ॥ जाकर कुरिया अंत रिक्ष छाई । सो हरिचंद देखल नहिं जाई ॥ मूरख मनुसा बहुत संजोई । अपने मरे और लगे रोई ॥ ई न जानै अपनेउ मरि जैबे । टका दश विढ़ और ले खैबे ॥

रमैनी ॥ ५६ ॥

साखी—अपनी अपनी करि गये । लागिन काहु के साथ ।
अपनी करिगये रावणा । अपनी दशरथ नाथ ॥ ५५ ॥

दिन दिन जरे जलनी के पाऊँ । गाड़े जायँ न उमगे काऊँ ॥ कंधन देइ मस्खरी करई । कहुधौं कौन भाँति निस्तरई ॥ अकर्म करै कर्म को धावे । पढ़ि गुनि वेद जगत समुझावे ॥ छूंछे परे अकारथ

जाई। कहहिं कबीर चित चेतहु भाई॥ ५६॥

रमैनी॥ ५७॥

कृतिया सूत्र लोक एक अहई। लाख पचास की आयु कहई॥ विद्या वेद पढ़े पुनि सोई। वचन कहत परतचौ होई॥ पैठा बात विद्या की पेटा। बाहुक भरम भया संकेता।

रमैनी॥ ५८॥

साखी—खगखोजनको तुम परे। पाछे अगम अपार।
बिन परचै कस जानिहो। कबीर झूठा है हंकार॥ ५७॥

तैं सुत मान हमारी सेवा। तोकहँ राज देउँ हो देवा॥ अगम दुगम गढ़ देऊँ छुड़ाई। औरो बात सुनहु कछु आई॥ उतपति परलय देउँ देखाई। करहु राज सुख विलसो जाई॥ एकौ बार न ह्वै है बांको। बहुरि जन्म न होइ है ताको॥ जाय पाप सुख होइ है घना॥ निश्चय वचन कबीर के मना॥

साखी—साधु संत तेई जना। (जिन्ह) मानल वचन हमार।
आदि अंत उत्पति प्रलय। देखहु दृष्टि पसार॥ ५८॥

रमैनी॥ ५९॥

चढ़त चढ़ावत भंडहर फोरी। मन नहिं जानै

केकरि चोरी । चोर एक मूसै संसारा । बिरला जन कोइ बूझन हारा ॥ स्वर्ग पताल भूम्य लै वारी । एकै राम सकल रखवारी ॥

साखी—पाहन ह्वै ह्वै सब गये । बिन भितियन के चित्र ॥
जासो कियेउ मिताइया । सो धन भया न हित्र ॥५९॥

रमैनी ॥ ६० ॥

छाड़हु पति छाड़हु लवराई । मन अभिमान टूटि तब जाई ॥ जिन ले चोरी भिच्छा खाई । सो बिरवा पलुहावन जाई ॥ पुनि संपति औ पतिको धावे । सो बिरवा संसार ले आवे ॥

साखी—झूठ झूठाके डारहू । मिथ्या यह संसार ।
तिहि कारण मैं कहत हौं । जाते होउ उवार ॥ ६० ॥

रमैनी ॥ ६१ ॥

धर्म कथा जो कहते रहई । लावरि नित उठि प्रातहि कहई ॥ लावरि विहाने लावरि संझा । एक लावरि बसे हृदया मंझा ॥ रामहु केर मर्म नहिं जाना । ले मति ठानिनि वेद पुराना ॥ वेदहु केर कहल नहिं करई । जरतइ रहे सुस्त नहिं परई ॥

साखी—गुणातीत के गावते । आपुहि गये गँवाय ॥
माटी तन माटी मिल्यो । पवनहिं पवन समाय ॥ ६१ ॥

रमैनी ॥ ६२ ॥

जो तू करता वर्ण विचारा । जन्मत तीनि दंड अनुसारा ॥ जन्मत शूद्र मुये पुनि शूद्रा । कृतम जनेउ घालि जग दुन्द्रा ॥ जो तू ब्राह्मण ब्राह्मणी को जाया । और राह दे काहे न आया ॥ जो तू तुरुक तुरुकिनि को जाया । पेटहि काहे न सुन्नति कराया ॥ कारी पियरी दूहहु गाई । ताकर दूध देहु बिलगाई ॥ छाँड़ कपट नर अधिक सयानी । कहहिं कबीर भजु शारंग पानी ॥ ६२ ॥

रमैनी ॥ ६३ ॥

नाना रूप वर्ण एक कीन्हा । चारि वर्ण वे काहु न चीन्हा ॥ नष्ट गये कर्ता नहीं चीन्हा ॥ नष्ट गये औरहि मन दीन्हा । नष्ट गये जिन्ह वेद बखाना । वेद पढ़े पर भेद न जाना ॥ बिमलख करे नैन नहि सूझा । भया अयान तब किछउ न बूझा ॥

साखी—नाना नाच नचाय के । नाचे नट के भेष ।
घट घट है अविनाशी । सुनहु तकी तुम शेष ॥ ६३ ॥

रमैनी ॥ ६४ ॥

काया कंचन जतन कराया । बहुत भाँति के मन पलटाया ॥ जो सौबार कहौं समुझाई । तैयो धरो छोरि नहिं जाई ॥ जनके कहे जन रहि जाई । नौ निद्धी सिद्धी तिन पाई ॥ सदा धर्म जाके हृदया बसई । राम कसौटी कसतहिं रहई ॥ जोरे कसावै अंते जाई । सो बाउर आपुहि बौराई ॥

साखी—लातेपगी कालकी फाँसी । क[illegible]ु न जान[illegible] चोर ।
जहँ सत तहँ सत सिनावे । मिलि रहे धूरहि धूर ॥ ६४ ॥

रमैनी ॥ ६५ ॥

अपने गुणको अवगुण कहहू । इहै अभाग जो तुम न विचारहू ॥ तूँ जियरा बहुते दुख पावा । जल विनु मीन कौन संचु पावा ॥ चातृक जलहल आसै पासा । स्वाँग धरे भव सागर आसा ॥ चातृक जलहल भरे जो पासा । मेघ न बरसे चले उदासा ॥ राम नाम इहै निजु सारा । औरो झूठ सकल

संसारा ॥ हरि उतंग तुम जाति पतंगा । यमघर कियेहु जीव को संगा ॥ किंचित है सपने निधि पाई । हिये न अमाय कहाँ धरों छिपाई ॥ हिये न समाय छोरि नहिं पारा । झूठा लोभ किछउ न विचारा॥ सुमृति कीन्ह आपु नहिं माना । तरुवर तर छर छार ह्वै जाना ॥ जिव दुर्मति डोलै संसारा । ते नहिं सूझै वार न पारा ॥

साखी-अंध भये सब डोलें, कोई न करे विचार ॥
कहा हमार माने नहीं, कैसे छूटे भ्रमजार ॥ ६५ ॥

रमैनी ॥ ६६ ॥

सोई हित बंधू मोहि भावे ॥ जात कुमारग मारग लावे ॥ सो सयान मारग रहि जाई । करे खोज कबहूँ न भुलाई ॥ सो झूठा जो सुतको तजई । गुरुकी दया राम ते भजई ॥ किंचित है एक तेज भुलाना ! धन सुत देखि भया अभिमाना ॥

साखी-दिया न खतना किया पयाना, मंदिर भया उजार ॥
मरिगये सो मरिगये, बाँचे बाचनहार ॥ ६६ ॥

रमैनी ॥ ६७ ॥

देह हलाय भक्ति नहिं होई । स्वांग धरे नर बहु विधि जोई ॥ धींगी धींगा भलो न माना । जोकाहू मोहि हृदया जाना ॥ मुख कछु और हृदय कछु आना । सपनेंहु काहु मोहि नहि जाना ॥ ते दुःख पैहौं ई संसारा । जो चेतहु तो होय उबारा । जो गुरु किंचित निंदा करई । सूकर श्वान जन्म सो धरई ॥

साखी—लखचौरासी जीव जतुमें, भटकि २ दुखपाव ॥
कहै कबीर जो रामहिं जाने, सो मोहि नीके भाव ॥६७॥

रमैनी ॥ ६८ ॥

तेहि वियोगते भयउ अनाथा । परेउ कुंजवन पावे न पंथा ॥ वेदो नकल कहे जो जाने । जो समभै सो भलो न माने ॥ नटवट विद्या खेल जो जाने । तेहि गुणको ठाकुर भलमाने ॥ उहै जो खेले सब घटमाहीं । दूसर कै कछु लेखा नाहीं ॥ भलो पोच जो अवसर आवे । कैसहु कै जन पूरा पावे ॥

साखी—जाके हिये शर लागे, सोइ जानेगा पीर ॥
लागे तो भागे नहीं, सुखसिंधु निहार कबीर ॥६८॥

रमैनी ॥ ६९ ॥

ऐसा योग न देखा भाई । भूला फिरे लिये गफिलाई ॥ महादेव को पंथ चलावे । ऐसो बड़ो महंत कहावे ॥ हाट बजारे लावे तारी । कच्चे सिद्ध न माया पियारी ॥ कब दत्ते मवासी तोरी । कब शुकदेव तोपची जोरी ॥ नारद कब बंदूक चलाया । व्यासदेव कब बंब बजाया ॥ करहिं लराई मतिके मंदा । ई अतीत कि तरकस बंदा ॥ भये विरक्त लोभ मन ठाना । सोना पहिरि लजावे बाना ॥ घोरा घोरी कीन्ह बटोरा । गांव पाय जस चले करोरा ॥

साखी—सुन्दरी न सोहे, सनकादिक के साथ ॥
कबहुक दाग लगावे, कारी हांडी हाथ ॥ ६९ ॥

रमैनी ॥ ७० ॥

बोलना कासो बोलिए रे भाई । बोलत ही सब तत्त्व नसाई ॥ बोलत बोलत बाढु विकारा । सो

बोलिये जो पड़े विचारा। मिलहिं संत वचन दुइ कहिए। मिलहिं असंत मौन होय रहिए ॥ पंडित सो बोलिये हितकारी। मूरख सो रहिए झखमारी ॥ कहहिं कबीर अर्ध घट डोले। पूरा होय विचार ले बोले ॥ ७० ॥

रमैनी॥ ७१ ॥

सोग बधावा (जिन्ह) सगकरि माना। ताकी बात इंद्रहु नहिं जाना ॥ जटा तोरि पहिरावैं सेली। योग मुक्तिकी गर्भ दुहेली ॥ आसन उड़ाय कौन बड़ाई। जैसे कौवा चील्ह मिडराई ॥ जैसी भीत तैसी है नारी। राज पाट सब गनै उजारी ॥ जस नरक तस चन्दन जाना। जस बाउर तस रहैं सयाना ॥ लपसी लौंग गनै एकसारा। खांड छाड़ि मुख फाँके छारा ॥

साखी–इहै विचार विचारते, गये बुद्धि बल चेत ॥
दुइमिलि एकै होय रहा, (मैं) काहि लगाऊँ हेत॥७१॥

रमैनी ॥ ७२ ॥

नारी एक संसारहि आई। माय न वाके बापहि

जाई ॥ गोड़ न मूड़ न प्राण अधारा । तामें भभरि रहा संसारा ॥ दिना सातले उनकी सही । बुद अदबुद अचरज का कही वाहिक वंदन करे सब कोई । बुद अदबुद अचरज बड़ होई ॥

साखी—मूस बिलाइ एक संग, कहु कैसे रहिजाय ॥
अचरज एक देखोहो संतो, हस्ती सिंहहि खाय ॥ ७२ ॥

रमैनी ॥ ७३ ॥

चली जात देखी एक नारी । तर गागर ऊपर पनिहारी ॥ चली जात वह बाटहि बाटा । सोवन हार के ऊपर खाटा ॥ जाड़न मरे सपेदी सौरी । खसम न चीन्हे घरणि भइ बौरी ॥ साँझ सकार दिया ले बारे । खसमहि छाड़ि संबरे लगवारे ॥ वाही के रस निसु दिन रांची । पिया सो बात कहे नहिं साँची ॥ सोवत छाँड़ि चली पिय अपना । ई दुख अबधौं कहे केहि सना ॥

साखी—अपनी जांघ उघारिके, अपनी कही न जाय ॥
की चित जाने आपना, की मेरों जन गाय ॥ ७३ ॥

रमैनी ॥ ७४ ॥

तहिया (होते) गुप्त अस्थूल न काया । न ताके सोग ताकि पै माया ॥ कँवल पत्र तरंग एक माहीं । संगहिं रहे लिप्त पै नाहीं ॥ आस ओस अंडमहँ रहई । अगनित अंड न कोई कहई ॥ निराधार अधार ले जानी । राम नाम ले उचरी वानी ॥ धर्म कहै सब पानी अहई । जातिके मन पानी अहई ॥ ढोर पतंग सरे घरियारा । तेहि पानी सब करैं अचारा फंद छोड़ि जो बाहर होई बहुरि पंथ नहिं जो है सोई ॥

साखी– भरम का बांधा यह जग, कोइ न करे विचार ॥
(एक) हरिकी भक्ति जाने विना, (भौ) बूड़ि मुवा संसार॥

रमैनी ॥ ७५ ॥

तेहि साहिब के लागहु साथा । दुइ दुख मेटि के होहु सनाथा ॥ दशरथ कुल अवतरि नहिं आया । नहिं लंकाके राव सताया ॥ नहिं देवकी के गर्भहिं आया । नहीं यशोदा गोद खिलाया ॥ पृथ्वी

खन धवन नहिं करिया। पैठि पताल नहिं वलि-छलिया॥ नहिं वलि रंजा सो मांडल रारी। नहिं हरणाकुश वधल पछारी। वराह रूप धरणि नहिं धरिया। क्षत्री मारि निक्षत्री नहिं करिया। नहिं गोवर्धन कर गहि धरिया॥ नहिं ग्वालन संग वन वन फिरिया॥ गंडुकी शालिग्राम नहिं कूला। मच्छ कच्छ होय नहिं जल डोला॥ द्वारावती शरीर न छाड़ा। ले जगन्नाथ पिंड नहिं गाड़ा॥

साखी—कहहिं कबीर पुकारिके, वै पथे मति भूल॥
जेहि राखेउ अनुमान के, सोथू ल नहीं स्थूल॥ ७५॥

रमैनी॥ ७६॥

माया मोह सकल संसारा। इहै विचार न काहु विचारा॥ माया मोह कठिन है फंदा। करे विवेक सोइ जनवंदा॥ राम नाम ले बेरा धारा। सोतो ले संसारहिं पारा॥

साखी—राम नाम अति दुर्लभ, औरेते नहिं काम॥
आदि अंत औ युग युग, (मोहि) रामहीवे संग्राम॥७६॥

एकै काल सकल संसारा । एक नाम है जगत पियारा ॥ त्रिया पुरुष कछु कथो न जाई । सर्वरूप जग रहा समाई ॥ रूप निरूप जाय नहिं बोली । हलुका गरुवा जाय न तोली ॥ भूखन तृषा धूप नहिं छाहीं । सुख दुख रहित रहे तेहि माहीं ॥

साखी—अपरंपर रूप वहुरंगी । आगे रूप निरूप न भायँ ।
वहुत ध्यानकै खोजिया । नहितिहि संख्या आय ॥ ७७ ॥

रमैनी ॥ ७८ ॥

मानुष जन्म चूकेहु अपराधी । यहि तन केरि वहुत हैं साभी ॥ तात जननि कहैं पुत्र हमारा । स्वारथ जानि कीन्ह प्रतिपारा ॥ कामिनि कहै मोर पिउ आही । वाघिनि रूप गिरासा चाही ॥ सुतहु कलत्र रहैं लौ लाई । यमकी नाईं रहे मुख वाई ॥ काग गिद्ध दोउ मरण विचारे । सुकर श्वान दोउ पंथ निहारे ॥ अग्नि कहै मैं ई तन जारों । पानि कहै मैं जरत उबारों ॥ धरती कहै मोहि मिलि जाई

पवन कहै सँग लेउँ उड़ाई ॥ तेहि घरको घर कै गँवारा। सो वैरी होय गले तुम्हारा ॥ सो तन तुम आपन के जानी। विषय स्वरूप भुलेउ अज्ञानी ॥

साखी–इतने तनके साझिया। जन्मौभरि दुख पाय ॥
चेतत नाहिं मुग्धनर वौरे। मोर मोर गोहराय ॥ ७८ ॥

रमैनी ॥ ७९ ॥

वढ़वत वढ़ी घटावत छोटी। परखत खरी परखावत खोटी ॥ केतिक कहौं कहाँ लौं कही॥ औरो कहौं पड़े जो सही॥ कहे विना मोहि रहा न जाई। विरही लेले कूकुर खाई ॥

साखी–खाते खाते युग भया। वहुरि न चेतहु आय ॥
कहहिं कवीर पुकारि कै। जीव अचेतै जाय ॥ ७९ ॥

रमैनी ॥ ८० ॥

वहुतक साहस करु जिय अपना। तेहि साहिव से भेंट न सपना ॥ खरा खोट जिन नहिं परखाया। चाहत लाभ तिन्ह मूल गमाया ॥ समुझि न परखि पातरी मोटी। ओछी गाँठि सबै भौ खोटी॥

कहहिं कबीर केहि देहो खोरी। जब चलि हो झिझि आसा तोरी॥

रमैनी ॥ ८१ ॥

देव चरित्र सुनहु हो भाई। जो ब्रह्मा सो धियेउ नसाई॥ दूजे कहौं मंदोदरि तारा। जेहि घर जेठ सदा लगवारा॥ सुरपति जाय अहिल्यहिं छरी। सुर गुरु घरणी चंद्रमै हरी॥ कहहिं कबीर हरिके गुण गाया। कुन्ती कर्ण कुँवारेहि जाया॥

रमैनी ॥ ८२ ॥

सुख के वृत्त एक जगत उपाया। समुझि न परलि विषय कछु माया॥ छौ चत्री पत्री युगचारी॥ फल दुइ पाप पुण्य अधिकारी॥ स्वाद अनंत कछु वर्णि न जाई। करि चरित्र सो ताहि समाई॥ जो नटवर साज साजिया साजी। जो खेले सो देखे बाजी॥ मोहा बापुरा युक्ति न देखा। शिव शक्ती विरंचि नहिं पेखा॥

साखी—परदे परदे चलि गई । समुझि परी नहिं बानि ॥
जो जाने सो बाँचि है । (नहिं)होत सकल की हानि॥८२॥

रमैनी ॥ ८३ ॥

छत्री करे छत्रिया धर्मा । सवाई वाके बाढ़े कर्मा ॥ जिन्ह अवधू गुरु ज्ञान लखाया । ताकर मन ताहि ले धाया ॥ छत्री सो जो कुटुम सो जूझे । पाँचो मेटि एक के बूझे ॥ जीव मारि जीव प्रति पाले । देखत जन्म आपनो हारे ॥ हाले करे निसाने घाऊ । जूझि परे तहँ मन्मथ राऊ ॥

साखी—मन्मत मरे न जीवै । जीवहिं मरण न होय ।
शून्यसनेही राम विनु । चले अपन पौ खोय ॥ ८३ ॥

रमैनी ॥ ८४ ॥

ये जियरा तै अपने दुखहि सम्हार । जेहि दुख व्यापि रहा संसार ॥ माया मोह बँधा सब लोई । अल्पै लाभ मूल गौ खोई ॥ मोर तोर में सबै बिगूर्चा । जननी गर्भ बोद्रमह सूता ॥ बहुतक खेल खेलें

वहुरूपा। जन भँवरा अस गये वहुता॥ उपजि विनसि फिर जुइनी आवे। सुख को लेश सपनेहु नहिं पावै॥दुख संताप कष्ट बहु पावे। सो न मिला जो जरत बुझावे॥ मोर तोर में जरे जग सारा। धिग स्वारथ झूठा हंकारा॥ झूठी आस रहा जग लागी। इन्हते भागि वहुरि पुनि आगी॥ जेहि हितके राखेउ सब लोई। सो सयान बाँचा नहिं कोई॥

साखी—आपु आपु चेतै नहीं। कहों तो रुसवा होय।
कहहिं कबीर जो आपु न जागे। निरास्ति अस्ति न होय८४

बीजक मूल ।

शब्द ॥ १ ॥

सन्तो भक्ति सद्गुर आनी ॥

नारी एक पुरुष दुइ जाया । बूझो पंडित ज्ञानी ॥ पाहन फोरि गंग एक निकरी । चहुँदिशि पानी पानी ॥ तेहि पानी दुइ पर्वत चूड़े । दरिया लहर समानी ॥ उड़ि माखी तरवरको लागी । बोले एकै बानी ॥ वहि माखी को माखा नाहीं । गर्भ रहा बिनुपानी ॥ नारी सकल पुरुष वे खाये । ताते रहे अकेला ॥ कहहिं कबीर जो अबकी बूझे । सोई गुरू हम चेला ॥ १ ॥

शब्द ॥ २ ॥

सन्तो जागत नींद न कीजे ।

काल न खाय कल्प नहिं व्यापे । देह जरा नहिं छीजे ॥ उलटी गंग समुद्रहि सोखे । शशि औ सूर्यहि ग्रासे ॥ नौ ग्रह मारि रोगिया बैठे । जलमें

त्रिम्ब प्रकासे ॥ त्रिनु चरणन को दुहुँ दिशि धावे । विनु लोचन जग सूझै ॥ शशा उलटि सिंहको ग्रासे । ई अचरज कोइ बूझै ॥ औंधे घड़ा नहीं जल बूड़े । सीधे सो जल भरिया ॥ जेहि कारण नर भिन्न भिन्न करे । सो गुरु प्रसादे तरिया ॥ वैठि गुफामें सब जग देखे । वाहर किछउ न सूझै ॥ उलटा वाण पारधिहि लागे । शूरा होय सो बूझै ॥ गायन कहे कवहुँ नहिं गावे । अनबोला नित गावै नटवट वाजा पेखनी पेखै । अनहद हेत वढ़ावे ॥ कथनी वदनी निजुकै जोवै । ई सब अकथ कहानी॥ धरती उलटि आकाशहि वेधै । ई पुरुषन की वानी॥ विना पियाला अमृत अँचवै । नदी नीर भरि राखै ॥ कहहिं कवीर सो युग युग जीवे ॥ जो राम सुधारस चाखै ॥ २ ॥

शब्द ॥ ३ ॥

सन्तो घरमें झगरा भारी ॥

राति दिवस मिलि उठि उठि लागे । पाँच

ढोटा एक नारी ॥ न्यारो न्यारो भोजन चाहे। पाँचो अधिक सवादी ॥ कोई काहुका हटा न माने आपुहि आप मुरादी ॥ दुर्मति के दोहागिन मेटे। ढोटेहि चाँप चपेरे ॥ कहहिं कबीर सोइ जन मेरा। जो घर की रारि निबेरे ॥ ३ ॥

॥ शब्द ॥ ४ ॥

सन्तो देखत जग बौराना ॥

साँच कहो तो मारन धावे। झूँठे जग पतियाना ॥ नेमी देखा धर्मी देखा। प्रात करे अस्नाना ॥ आतम मारि पषाणहिं पूजे। उनमें किछउ न ज्ञाना ॥ बहुतक देखा पीर औलिया। पढ़ै कितेब कुराना। कै मुरीद ततबीर बतावें। उनमें उहै जो ज्ञाना ॥ आसन मारि डिंभ धरि बैठे। मनमें बहुत गुमाना। पीतर पाथर पूजन लागे। तीरथ गर्भ भुलाना ॥ माला पहिरे टोपी पहिरे। छाप तिलक अनुमाना ॥ साखी शब्दै गावत भूले। आतम खबरि न जाना ॥ हिन्दू कहैं मोहिं राम

प्यारा । तुरुक कहें रहिमाना । आपुस में दोउ लरि लरि मूये । मर्म न काहू जाना ॥ घर घर मंतर देत फिरतु हैं । महिमा के अभिमाना ॥ गुरु सहित शिष्य सब बूड़े । अंतकाल पछताना ॥ कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो । ई सब भरम भुलाना ॥ केतिक कहौं कहा नहिं माने । सहजै सहज समाना ॥४॥

शब्द ॥ ५ ॥

संतो अचरज एक भौ भारी । कहौं तो को पतियाई ॥ एकै पुरुप एक है नारी । ताकर करहु विचारा ॥ एकै अंड सकल चौरासी । भरम भुला संसारा ॥ एकै नारी जाल पसारा । जगमें भया अंदेशा ॥ खोजत खोजत काहु अंत न पाया । ब्रह्मा विष्णु महेशा ॥ नाग फाँस लिये घट भीतर । मूसेनि सब जग भारी ॥ ज्ञान खड्ग बिनु सब जग जूझैं । पकरि न काहू पाई ॥ आपै मूल फूल फुलवारी । आपहिं चुनि चुनि खाई ॥ कहहिं कबीर ते ई जन उबरे । जेहि गुरु लियो जगाई ॥

शब्द ॥ ६ ॥

संतो अचरज एक भौ भारी। पुत्र धइल महतारी। पिताके संग भई बावरी। कन्या रहल कुँवारी॥ खसमहि छाड़ि ससुर सँग गौनी। सो किन लेहु विचारी। भाई के सँग सासुर गौनी। सासुहि सावत दीन्हा। ननद भौज परपंच रचों है, मोर नाम कहि लीन्हा॥ समधी के संग नाही आई। सहज भई घरबारी। कहहिं कबीर सुनो हो संतो। पुरुष जन्म भौ नारी॥ ६॥

शब्द ॥ ७ ॥

संतो कहौं तो को पतियाई। झूठ कहत साँच बनि आई॥ लौके रतन अवेध अमोलिक। नहिं गाहक नहिं साँई॥ चिमिक चिमिक चिमकै हग दहु दिश। अर्ब रहा छिरियाई॥ आपै गुरु कृपा कछु कीन्हा। निर्गुन अलख लखाई॥ सहज समाधी उन्मनि जागे। सहज मिले रघुराई॥ जहँ जहँ देखा तहँ तहँ सोई। मन मानिक बेधो हीरा॥

परम तत्व गुरु सो पावे । कहै उपदेश कबीरा ॥७॥

शब्द ॥ ८ ॥

सन्तो आवे जाय सो माया ।

है प्रतिपाल काल नहिं वाके । ना कहुँ गया न आया ॥ का मकसूद मच्छ कच्छ न होई । शंखासुर न संहारा ॥ है दयाल द्रोह नहिं वाके । कहहु कौन को मारा ॥ वै कर्ता नहिं वराह कहाये । धरणि धर्यो नहिं भारा ॥ ई सब काम साहेब के नाहीं । झूठ कहैं संसारा ॥ खंभ फारि जो बाहर होई । ताहि पतीजे सब कोई ॥ हिरणाकुश नख उदर बिदारा । सो कर्ता नहिं होई ॥ बावन रूप न बलिको जाँचे । जो जाँचे सो माया ॥ बिना बिवेक सकल जग भरमें । माया जग भरमाया ॥ परशुराम क्षत्री नहिं मारे । ई छल माया कीन्हा ॥ सत गुरु भेद भक्ति नहिं जाने । जीवहिं मिथ्या दीन्हा ॥ सिर्जन हार न ब्याही सीता । जल पषाण नहिं बंधा ॥ वे रघुनाथ एक कै सुमिरे । जो सुमिरे सो

अंधा ॥ गोपी ग्वाल न गोकुल आया । करतें कंस न मारा ॥ है मेहरवान सबहिन को साहेब । ना जीता ना हारा ॥ वे कर्ता नहिं बौद्ध कहावे । नहीं असुर संहारा ॥ ज्ञान हीन कर्ता के भरमें । माये जग भर्माया ॥ वे कर्ता नहिं भय निकलंकी । नहिं कालिंगहि मारा ॥ ई छल बल सब माया कीन्हा । जत्त सत्त सब टारा ॥ दश अवतार ईश्वरी माया । कर्ता कै जिन पूजा । कहहिं कबीर सुनो हो संतो । उपजे खपे जो दूजा ॥ ८ ॥

शब्द ॥ ६ ॥

सन्तो बोले ते जग मारे ।

अनबोले ते कैसक बनि है ॥ शब्दहि कोइ न विचारे ॥ पहिले जन्म पुत्रको भयऊ । बाप जन्मिया पाछे ॥ बाप पूतकी एकै नारी । ई अचरज कोई काछे ॥ दुंदुर राजा टीका बैठे । विषहर करें खवासी ॥ श्वान बापुरो धरनि ढाकनो । बिल्ली घर में दासी ॥ कार दुकार कार करि आगे । बैल करें

पटवारी ॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो । भैंसे न्याव निबेरी ॥ ९ ॥

शब्द ॥ १० ॥

सन्तो राह दुनों हम दीठा ।

हिन्दू तुरुक हटा नहिं माने । स्वाद सबन को मीठा ॥ हिन्दू बरत एकादशी साधे । दूध सिंघारा सेती ॥ अन्नको त्यागे मनको न हटके । पारन करैं सगोती ॥ तुरुक रोजा निमाज गुजारे । बिसमिल बाग पुकारे ॥ इनको बिहिस्त कहाँ से होवे । जो साँझे मुरगी मारे ॥ हिन्दु की दया मेहर तुरुकन की । दोनों घट सो त्यागी ॥ ई हलाल वै झटका मारे । आग दुनों घर लागी ॥ हिन्दू तुरुक की एक राह है । सतगुरु सोई लखाई ॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो । राम न कहूँ खुदाई ॥ १० ॥

शब्द ॥ ११ ॥

सन्तो पाँडे निपुण कसाई ।

बकरा मारि भैंसा पर धावे । दिलमें दर्द न

आई ॥ करि अस्नान तिलक दे बैठे । विधिसों देवि पुजाई ॥ आतम राम पलक में बिनसे । रुधिरकी नदी बहाई ॥ अति पुनीत ऊँचे कुल कहिये । सभा माहिं अधिकाई ॥ इन्हते दीक्षा सब कोई माँगे । हँसी आवे मोहि भाई ॥ पाप कटन को कथा सुनावें । कर्म करावें नीचा ॥ हम तो दुनो परस्पर देखा । यम लाये हैं धोखा ॥ गाय बधेते तुरुक कहिये । इनते वे क्या छोटे ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतों । कलिमा ब्राह्मण खोटे ॥११॥

शब्द ॥ १२ ॥

संतो मते मातु जन रंगी ।

पियत पियाला प्रेम सुधारस । मतवाले सतसंगी ॥ अर्घे ऊर्धे भाठी रोपिनि । लेत कसारस गारी ॥ मूँदे मदन काटि कर्म कस्मल । संतति चुवत अगारी ॥ गोरखदत्त वशिष्ठ व्यास कवि । नारद शुक मुनि जोरी ॥ बैठे सभा शंभु सनकादिक । तहँ फिरे अधर कटोरी ॥ अंबरीष औ जाज्ञ

जनक जड़ । शेष सहस मुख फाना ॥ कहाँ लो गनों अनंत कोटि लों । अमहल महल दिवाना ॥ ध्रुव प्रहलाद विभीषण माते । माती शेवरी नारी ॥ निर्गुण ब्रह्म माते वृन्दावन । अजहूँ लागु खुमारी ॥ सुर नर मुनि यति पीर औलिया । जिनरे पिया तिन जाना ॥ कहैं कबीर गूँगेकी शक्कर । क्योंकर करे बखाना ॥ १२ ॥

शब्द ॥ १३ ॥

राम तेरी माया दुंद मचावे ।

गति मति वाकी समुझि परै नहिं । सुर नर मुनिहि नचावे ॥ क्या सेमर तेरि शाखा बढ़ाये । फूल अनूपम बानी ॥ केतेक चातृक लागि रहे हैं । देखत रुवा उड़ानी ॥ काह खजूर बड़ाई तेरी । फल कोई नहिं पावे ॥ ग्रीषम ऋतु जब आनि तुलानी । तेरी छाया काम न आवे ॥ आपन चतुर और को सिखवे । कनक कामिनी सयानी । कहहिं कबीर सुनो हो संतो । राम चरण ऋत मानी ॥ १३ ॥

शब्द ॥ १४ ॥

रामुरा संशय गांठि न छूटे । ताते पकरि पकरि यम लूटे ॥ होय कुलीन मिस्कीन कहावे । तूँ योगी सन्यासी ॥ ज्ञानी गुणी सूर कवि दाता । ये पति किनहु न नासी ॥ सुम्रति वेद पुराण पढ़े सब । अनुभव भाव न दरसे । लोह हिरण्य होय धौं कैसे । जो नहिं पारस परसे ॥ जियत न तरेहु मुये का तरिहौ । जियत हि जो न तरे ॥ गाहि परतीत कीन्ह जिन्ह जासो । सोइ तहाँ अमरे ॥ जो कछु कियउ ज्ञान अज्ञाना । सोई समुझ सयाना ॥ कहहिं कबीर तासों क्या कहिये । जो देखत दृष्टि भुलाना ॥ १४ ॥

शब्द ॥ १५ ॥

रामुरा चली विन बनमा हो ॥ घर छोड़े जात जोलहा हो ॥ गज नौ गज दस गज उनइस की । पुरिया एक तनाई ॥ सात सूत नौ गंड बहत्तर । पाट लागु अधिकाई ॥ तापट तुला तुले नहीं गज

न अमाई । पैसन सेर अढ़ाई ॥ तामें घटे बढ़े रतियो नहीं । कर कच करे गहराई ॥ नित उठि बैठि खसम सो बरबस । तापर लागु तिहाई ॥ भीगी पुरिया काम न आवे । जोलहा चला रिसाई ॥ कहहिं कबीर सुनोहो संतो । जिन्ह यह सृष्टि बनाई ॥ छाड़ पसार राम भजु बौरे । भवसागर कठिनाई ॥ १५ ॥

शब्द ॥ १६ ॥

रामुरा भीभी जंतर बाजे । कर चरण बिहूना नाचै ॥ करबिनु बाजे सुनै श्रवण बिनु । श्रवण श्रोता सोई ॥ पाठन सुबस सभा बिनु अवसर । बूझो मुनि जन लोई । इन्द्रिय बिनु भोग स्वाद जिभ्या बिनु । अक्षय पिंड बिहूना । जागत चोर मंदिर तहाँ मूसै । खसम अछत घर सूना ॥ बीज बिनु अंकुर पेड़ बिनु तरिवर । बिनु फूले फल फरिया ॥ बांझ कि कोख पुत्र अवतरिया । बिनु पग तरिवर चढ़िया ॥ मंसि बिनु द्वाइत कलम बिनु कागद ।

बिनु अच्छर सुधि होई ॥ सुधि बिनु सहज ज्ञान बिनु ज्ञाता । कहहिं कबीर जन सोई ॥ १६ ॥

शब्द ॥ १७ ॥

रामहिं गावे औरहि समुझावे । हरि जाने बिनु बिकल फिरे ॥ जेहि मुख वेद गायत्री उचरे । ताके वचन संसार तरे ॥ जाके पाँव जगत उठि लागे । सो ब्राह्मण जीव बध करे ॥ अपने ऊँच नीच घर भोजन । घीन कर्म हठि वोद्र भरे॥ ग्रहन अमावस ढुकि ढुकि माँगे । कर दीपक लिये कूप परे ॥ एकादशी व्रत नहिं जाने । भूत प्रेत हठि हृदय धरे ॥ तजि कपूर गाँठि विष बाँधे । ज्ञान गँवाये मुग्ध फिरे ॥ छीजे साहु चोर प्रतिपाले । संत जना की कूटि करे ॥ कहहिं कबीर जिभ्याके लपंट। यहि विधि प्राणी नर्क परे ॥ १७ ॥

शब्द ॥ १८ ॥

राम गुण न्यारो न्यारो न्यारो ॥

अबुझा लोग कहाँलो बूझे । बूझनहार बि-

चारो ॥ के तेहि रामचन्द्र तपसी से । जिन्ह यह जग बिटमाया ॥ के तेहि कान्ह भये मुरलीधर । तिन्ह भी अंत न पाया ॥ मच्छ कच्छ वाराह स्वरूपी । वामन नाम धराया ॥ केतेहि बौद्ध निकलंकी कहिये । तिन्ह भी अंत न पाया ॥ केतेहि सिद्ध साधक सन्यासी । जिन्ह वनवास वसाया ॥ केतेहि मुनिजन गोरख कहिये । तिन्हभी अंत न पाया ॥ जाकी गति ब्रह्म नहिं जानी । शिव सनकादिक हारे ॥ ताके गुण नर कैसे के पैहो । कहहिं कबीर पुकारे ॥ १८ ॥

शब्द ॥ १९ ॥

ये तत्तु राम जपो हो प्रानी । तुम बूझहु अकथ कहानी ॥ जाके भाव होत हरि ऊपर । जागत रैनि बिहानी ॥ डाइनि डारे स्वनहा डोरे । सिंह रहे वन घेरे ॥ पांच कुटुम मिलि जूझन लागे । वाजन बाजु घनेरे ॥ रेहु मृगा संशय वन हाँके । पारथ बाणा मेलै ॥ सायर जरे सकल वन डाहैं ।

मच्छ अहेरा खेलै ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो जो यह पद अर्थावे । जो यह पद को गाय विचारे आप तरे औ तारे ।

शब्द ॥ २० ॥

- कोई राम रसिक रस पीयहु गे । पीयहु गे युग जीयहु गे ॥ फललंकृत बीज नहिं बकला । शुक पंछी तहाँ रस खाई ॥ चूवै न बुंद अंग नहिं भीजै । दास भँवर सब सँग लाई ॥ निगम रिसाल चारि फल लागे । तामे तीनि समाई ॥ एक दूरि चाहें सब कोई । जतन जतन कहु बिरले पाई । गै बसंत ग्रीपम ऋतु आई । बहुरि न तरिवर तर आवै॥ कहैं कबीर स्वामी सुख सागर । राम मगन होय सो पावे ॥ २० ॥

शब्द ॥ २१ ॥

राम न रमसि कौन डंड लागा । मरि जैबे का करबे अभागा ॥ कोई तीरथ कोई मुंडित केसा । पाखंड मंत्र भरम उपदेशा ॥ विद्या वेंद पढ़ि करे

हंकारा । अंतकाल मुख फाँके छारा ॥ दुखित सुखित है कुटुम जेवावे । मरण बार' एकसर दुख पावे ॥ कहहिं कबीर यह कलि है खोटी । जो रहे करवा सो निकरै टोटी ॥

शब्द ॥ २२ ॥

अवधू छाडहु मन विस्तारा ।

सो पद गहो जाहि ते सदगति । पार ब्रह्म सो न्यारा ॥ नहिं महादेव नहिं महम्मद । हरि हजरत कुछ नाहीं ॥ आदम ब्रह्मा नहिं तब होते । नहीं धूपो नहीं छांही ॥ असी सहस पैगम्बर नाहीं । सहस अठासी मूनी ॥ चंद्रसूर्य तारागन नाहीं । मच्छ कच्छ नहिं दूनी ॥ वेद कितेब सुमृति नहिं संजम । नहिं जीवन परछाई ॥ बंग निमाज कलमा नहिं होते । रामहु नाहिं खुदाई ॥ आदि अंत मन मध्य न होते आतश पवन न पानी ॥ लख चौरासी जीव जंतु नहिं । साखी शब्द न बानी ॥ कहहिं कबीर सुनो हो अवधू । आगे करहु विचारा ॥ पूरण ब्रह्म कहाँते प्रगटे । कृत्रिम कीन्ह उपराजा ॥ २२ ॥

छानवे । ये कल काहु न जाना ॥ आलम दुनियाँ सकल फिरि आये । ये'कल उँहे न आना ॥ तजि करिगह जगतउ चाये । मनमो मन न समाना ॥ कहहिं कवीर योगी औ जंगम । फीकी उनकी आसा ॥ रामहिं नाम रटे ज्यों चातृक । निश्चय भक्ति निवासा ॥

शब्द ॥ २७ ॥

भाई रे अद्भुत रूप अनूप कथ्यो है । कहौं तो को पतिआई ॥ जँहँ २ देखो तहँ २ साईं सब घट रहा समाई ॥ लच्च विनु सुख दरिद्र विनु दुख । नींद विना सुख सोवे ॥ जस विनु ज्योति रूप विनु आशिक । ऐसो रतन विहूना रोवे ॥ भ्रम विनु गंजन मणि विनु नीरख रूप विना वहु रूपा ॥ थिति विनु सुरति रहस विनु आनँद । ऐसो चरित अनूपा ॥ कहहिं कवीर जगत हरि मानिक । देखो चित अनुमानी ॥ परिहरि लाख लोभ कुटुम तजि । भजहु न शारंगपानी ॥ २७ ॥

शब्द ॥ २८ ॥

भाई रे गइया एक विरंची दियो है। गइया भार अभार भौ भारी ॥ नौ नारी को पानी पियतु हैं। तृषा तैयो न बुझाई ॥ कोठा बहत्तर औ लौ लावे। वज्र केवाड़ लगाई ॥ खूँटा गाड़ि दवरि दृढ़ बाँधेउ। तैयो तोर पराई ॥ चारि वृक्ष छौ शाखा वाके। पत्र अठारह भाई ॥ एतिक ले गम कीहिस गइया। गइया अति रे हरहाई ॥ ई सातों ओरों हैं सातों। नौ औ चौदह भाई ॥ एतिक गइया खाय बढ़ायो। गइया तैयो न अघाई ॥ पुरतामें राति है गइया। सेत सींग है भाई ॥ अवरण वर्ण किछुइ नहिं वाके। खाद अखादहिं खाई ॥ ब्रह्मा विष्णु खोजि ले आये। शिव सनकादिक भाई ॥ सिद्ध अनंत वाके खोज परे हैं। गइया किनहुँ न पाई ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो। जो यह पद अर्थावे॥ जो यह पद को गाय विचारे। आगे होय निर्वाहे॥२८॥

शब्द ॥ २९ ॥

भाई रे नयन रसिक जो जागे ॥ टेक ॥

पारब्रह्म अविगति अविनासी । कैसहु के मन लागे ॥ अमली लोग खुमारी तृष्णा । कतहुँ संतोष न पावे । काम क्रोध दोनों मतवाले ॥माया भरि भरि आवे ॥ ब्रह्म कलाल चढ़ाइनि भाठी ॥ ले इन्द्री रस चाहे ॥ संगहि पोच है ज्ञान पुकारे । चतुरा होय सो पावे॥संकट सोच पोच यह कलिमा। बहुतक व्याधि शरीरा ॥ जहाँ धीर गंभीर अति निश्चल । तहाँ उठि मिलहु कबीरा ॥ २९ ॥

शब्द ॥ ३० ॥

भाई रे दुइ जगदीश कहाँ ते आया । कहु कौने बौराया ॥ अल्लाह राम करीमा केशव । हरि हजरत नाम धराया ॥ गहना एक कनक ते गहना । यामें भाव न दूजा ॥ कहन सुनन को दुइ करि थापे । यक निमाज यक पूजा॥वोही महादेव वोही महम्मद । ब्रह्मा आदम कहिये ॥ को हिंदू को तुरुक

कहावे । एक जिमीं पर रहिये ॥ वेद कितेब पढ़े वै कुतबा । वै मोलना वै पाँड़े ॥ बेगर बेगर नाम धराये । एक मटिया के भाँड़े ॥ कहहिं कबीर वे दूनों भूले । रामहिं किनहु न पाया ॥ वे खसी वै गाय कटावें । वादिहि जन्म गमाया ॥ ३० ॥

शब्द ॥ ३१ ॥

हंसा संशय छूरी कुहिया । गइया पीवै बछरुवै दुहिया ॥ घर घर साउज खेले अहेरा । पारथ ओटा लेई ॥ पानी माहिं ततुफ गई भुंभुरी । धूरि हिलोरा देई ॥ धरती बरसे बादर भीजे । भीट भये पौराऊ ॥ हंस उड़ाने ताल सुखाने । चहले बिधॉ पाऊ ॥ जौलों कर डोले पगु चाले । तौलों आस न कीजे ॥ कहहिं कबीर जेहि चलत न दीसे । तासु बचन का लीजे ३१

शब्द ॥ ३२ ॥

हंसा हो चितै चेतु सबेरा । इन्ह परपंच कैल बहुतेरा ॥ पाखंड रूप रचो इन्ह तिरगुन । तेहि पाखंड भुलल संसारा ॥ घरके खसम बधिक वै राजा ।

परजा क्या धों करें बिचारा ॥ भक्ति न जाने भक्त कहावे । तजि अमृत विष केलिन सारा ॥ आगे आगे ऐसेहि बूड़े । तिनहुँ न मानल कहा हमारा ॥ कहा हमार गांठि दृढ़ बांधो । निशिवासर रहियो हुशियारा ॥ ये कलि गुरु बड़े परपंची । डारि ठगोरी सब जग मारा ॥ वेद कितेब दोउ फंद पसारा । तेहिं फंदे परु आप बिचारा ॥ कहहिं कबीर ते हंस न बिसरे । जेहिमा मिले छुड़ावन हारा ॥ ३२ ॥

शब्द ॥ ३३ ॥

हंसा प्यारे सरवर तजि कहाँ जाय ॥ टेक ॥ जेहि सरवर बिच मोतिया चुगत होते । बहु विधि केलि कराय ॥ सूखे ताल पुरइनि जल छँड़ि । कमल गये कुम्हिलाय ॥ कहहिं कबीर जो अब की बिछुरे । बहुरि मिलो कब आय ॥ ३३ ॥

शब्द ॥ ३४ ॥

हरिजन हंस दशा लिये डोले । निर्मल नाम चुनी चुनि बोले ॥ मुक्ताहल लिये चोंच लोभावे ।

मौन रहे की हरिजस गावे ॥ मानसरोवर तट के वासी । राम चरण चित अंत उदासी ॥ काग कुबुद्धि निकट नहिं आवे । प्रति दिन हंसा दर्शन पावे ॥ नीर चीर का करे निबेरा । कहहिं कबीर सोई जन मेरा ॥ ३४ ॥

शब्द ॥ ३५ ॥

हरि मोर पीउ में राम की बहुरिया । राम बड़ो मैं तनकी लहुरिया ॥ हरि मोर रहँटा मैं रतन पिउरिया । हरिका नाम ले कतति बहुरिया ॥ छौ मास तागा बरस दिन कुकुरी । लोग कहें भल कातल बपुरी ॥ कहहिं कबीर सूत भल काता । चरखा न होय मुक्ति कर दाता ॥ ३५ ॥

शब्द ॥ ३६ ॥

हरि ठग जगत ठगौरीलाई । हरिके वियोग कस जियहु रे भाई ॥ को काको पुरुष कौन काकी नारी । अकथ कथा यमदृष्टि पसारी ॥ को काको पुत्र कौन काको बापा । को रे मरै को सहै संता-

पा ॥ ठगि ठगि मूल सबनको लीन्हा । राम ठगौरी काहु न चीन्हा ॥ कहहिं कबीर ठगसो मन माना । गई ठगौरी जब ठग पहिचाना ॥ ३६ ॥

शब्द ॥ ३७ ॥

हरिठग ठगत सकल जग डोले । गौन करत मोसे मुखहु न बोले ॥ बालापनके मीत हमारे । हमहिं तजि कहँ चलेउ सकारे । तुमहि पुरुष मैं नारि तुम्हारी । तुम्हरी चाल पाहनहु ते भारी ॥ माटि को देह पवन को शरीरा । हरि ठग ठगसो डरे कबीरा ॥ ३७ ॥

शब्द ॥ ३८ ॥

हरि बिनु भर्म बिगुर्चनि गंदा ॥ टेक ॥

जहँ जहँ गयउ अपुन पौ खोयेउ । तेहि फंदे बहुफंदा ॥ योगी कहै योग है नीका । द्वितिया और न भाई ॥ चुंडित मुंडित मौनी जटाधारी । तिन कहु कहाँ सिधि पाई ॥ ज्ञानी गुणी सूर कवि दाता । ई जो कहैं बड़ हमहीं ॥ जहां से उपजे तहां

समाने । छूटि गये सब तबहीं ॥ बायें दहिने तजो विकारा । निजुकै हरिपद गहियो ॥ कहहिं कबीर गूँगे गुर खाया । पूछे सो क्या कहिया ॥ ३८ ॥

शब्द ॥ ३९ ॥

ऐसो हरिसो जगत लरतु है । पांडुर कतहूँ गरुड़ धरतु है ॥ मूस बिलाइ कैसन हेतू । जंबुक करै केहरि सो खेतू । अचरज एक देखो संसारा । स्वनहा खेदै कुंजर असवारा ॥ कहहिं कबीर सुनो संतो भाई । इहै संधि काहु बिरले पाई ॥ ३९ ॥

शब्द ॥ ४० ॥

पंडित वाद बदे सो झूठा ॥ टेक ॥

रामके कहे जगत गति पावे । खाँडकहे मुख मीठा ॥ पावक कहे पॉव जो डाहे । जल कहे तृषा बुझाई ॥ भोजन कहे भूख जो भाजै । तो दुनियां तरिजाई ॥ नरके संग सुवा हरि बोलै । हरि परताप न जानै ॥ जो कबही उड़िजाय जंगल में । तो हरि सुरति न आनै ॥ बिनु देखे बिनु अर्स पर्स

विनु । नाम लिये क्या होई ॥ धनके कहे धनिक जो होवै । निर्धन रहे न कोई ॥ सांची प्रीति विषय माया सो । हरि भक्तन को फांसी ॥ कहहिं कबीर एक रामभजे विनु । बाँधे यमपुर जासी ॥ ४० ॥

शब्द ॥ ४१ ॥

पंडित देखहु मनमें जानी ॥ टेक ॥

कहुधौं छूति कहां से उपजी । तबहिं छूति तुम मानी ॥ नादे विंद रुधिर के संगे । घटही में घट सपचे ॥ अष्ट कवल है पुहुमी आया । छूति कहां से उपजे ॥ लख चौरासी नाना वासन । सो सब सरि भौ माटी । एकै पाट सकल बैठाये । छूति लेत धौं काकी ॥ छूतिहि जेंवन छूतिहिं अचवन छूतिहि जगत उपाया ॥ कहहिं कबीर ते छूति विवार्जित । जाके संग न माया ॥ ४१ ॥

शब्द ॥ ४२ ॥

पंडित शोधि कहो समुझाई । जाते आवागमन नसाई ॥ अर्थ धर्म औ काम मोच कहु ।

कौन दिसा वसे भाई ॥ उत्तर कि दक्खिन पूरब कि पश्चिम । स्वर्ग पताल कि माँहीं ॥ विना गोपाल ठौर नहिं कतहूँ । नर्क जात धौं काहीं ॥ अनजाने को स्वर्ग नर्क है । हरि जाने को नाहीं ॥ जेहि डरसे सब लोग डरतु हैं । सो डर हमरे नाहीं ॥ पाप पुण्य की शंका नाहीं । स्वर्ग नर्क नहिं जाई ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । जहाँ का पद तहाँ समाई ॥ ४२ ॥

शब्द ॥ ४३ ॥

पंडित मिथ्या करहु विचारा । ना वहाँ सृष्टि न सिरजन हारा ॥ थूल अस्थूल पौन नहिं पावक । रवि शशि धरणि न नीरा ॥ ज्योति स्वरूप काल नहिं जहवां । वचन न आहि शरीरा ॥ कर्म धर्म किछुवो नाहिं उहवाँ । न वहां मंत्र न पूजा ॥ संजम सहित भाव नहिं जहवाँ । सो धौं एक कि दूजा ॥ गोरख राम एकौ नहिं उहवाँ । ना वहां वेद विचारा ॥ हरि हर ब्रह्मा नहिं शिव शक्ती । तीर्थउ

नाहिं अचारा। माय बाप गुरु जहवाँ नाहीं। सो धों दूजा कि अकेला॥ कहहिं कबीर जो अबकी बूझै। सोई गुरु हम चेला॥ ४३॥

शब्द ॥ ४४ ॥

बुझ बुझ पंडित करहु विचारा। पुरुष अहै कि नारी॥ ब्राह्मण के घर ब्राह्मणी होती। योगी के घर चेली॥ कलमा पढ़ि पढ़ि भई तुरुकनी। कलमें रहत अकेली॥ वर नहिं वरे व्याह नहिं करे। पुत्र जन्मावन हारी॥ कारे मूँड को एकहु न छांडी। अजहूँ आदि कुमारी॥ मैके रहे जा नहिं सखुरे। साँई संग न सोवों॥ कहैं कबीर मैं युग युग जीवों॥ जाति पांति कुल खोवों॥ ४४॥

शब्द ॥ ४५ ॥

को न मुवा कहो पंडित जना। सो समुझाय कहो मोहि सना॥ मूये ब्रह्मा विष्णु महेशू। पार्वती सुत मूये गणेशू॥ मूये चंद्र मुये रवि शेषा। मूये हनुमंत जिन्ह बांधल सेता॥ मूये कृष्ण मूये कर-

तारा। एक न मुवा जो सिरजन हारा ॥ कहहिं कवीर मुवा नहिं सोई। जाको आवागवन न होई ॥ ४५ ॥

शब्द ॥ ४६ ॥

पंडित एक अचरज वड होई ॥ टेक ॥

एक मरे मुये अन्न न खाई। एक मरे सीझे रसोई॥ करि अस्नान देवन की पूजा। नौगुण काँध जनेऊ॥ हँड़िया हाड़ हाड़ थरियामुख। अव पटकर्म वनेऊ॥ धर्म करे जहाँ जीव बधतु हैं। अकर्म करे मेरे भाई॥ जो तोहरा को ब्राह्मण कहिए। तो काको कहिए कसाई॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो। भरम भूलि दुनियाई॥ अपरं पार पार पुरुषोत्तम। या गति विरले पाई ॥ ४६ ॥

शब्द ॥ ४७ ॥

पांडे बूझि पियहु तुम पानी ॥ टेक ॥

जेहि मटियाके घर में वैठे। तामें सृष्टि समानी॥ छप्पन कोटि जादव जहाँ भींजे॥ मुनि जन सहस

अठासी ॥ पैग पैग पैगम्बर गाड़े । सो सब सरि भौ माटी ॥ मच्छ कच्छ घरियार बियाने । रुधिर नीर जल भरिया ॥ नदिया नीर नर्क वहि आवे । पशु मानुप सब सरिया ॥ हाड़ भरिभरि गूद गलि गलि । दूध कहाँ से आया ॥ सोले पाँडे जेवन बैठे मटियहि छूति लगाया ॥ वेद कितेब छाँड़ि देहु पांडे ई सब मनके भरमा ॥ कहहिं कबीर सुनो हो पाँडे ई सब तुम्हारो कर्मा ॥ ४७ ॥

शब्द ॥ ४८ ॥

पंडित देखहु हृदय विचारी। को पुरुषा को नारी॥ सहज समाना घट घट बोले। वाके चरित अनूपा। वाको नाम काह कहि लीजे । ना वाके वर्ण न रूपा ॥ तें मैं क्या करसी नर बौरे। क्या मेरा क्या तेरा ॥ राम खुदाय शक्ति शिव एके । कहु धौं काहि निहोरा ॥ वेद पुराण कितेब कुराना । नाना भाँति बखाना ॥ हिंदू तुरुक जैनि औ योगी। ये कल काहु न जाना॥ छौ दर्शन में जो परवाना।

तासु नाम मन माना ॥ कहहिं कवीर हमहिं पै वौरे । ई सव खलक सयाना ॥

शब्द ॥ ४६ ॥

बुझ २ पंडित पद निर्वान । सांझ परे कहवाँ वसे भान ॥ ऊँच नीच पर्वत ढेला न ईंट । विनु गायन तहवाँ उठे गीत ॥ ओस न प्यास मंदिर नहिं जहवाँ । सहसों धेनु दुहावें तहवाँ ॥ नित्ते अमावस नित संक्रांती । नित नित नवग्रह वैठे पांती ॥ मैं तोहि पूछौं पंडित जना । हृदया ग्रहन लागु केहि खना ॥ कहहिं कवीर इतनो नहिं जान । कौन शब्द गुरु लागा कान ॥ ४६ ॥

शब्द ॥ ५० ॥

बुझ बुझ पंडित विरवा न होय । आधे वसे पुरुष आधे वसे जोय ॥ विरवा एक सकल संसारा । स्वर्ग शीश जर गई पतारा ॥ वारह पखुरिया चौवीस पात । घने वरोह लागे चहुँ पास ॥ फूले न फले

सपने की नाईं॥ जना चारि मिलि लगन सोधाये। जना पाँच मिलि माँड़ो छाये॥ सखी सहेलरि मंगल गावैं॥ दुख सुख माथे हरदि चढ़ावैं ॥ नाना रूप परी मन भाँवरि। गाँठि जोरि भाई पतिया ई॥ अर्घा दे ले चली सुवासिनी। चौके राँड भई सँग साँई॥ भयो विवाह चली बिनु दुलहा। बाट जात समधी समुझाई॥ कहैं कबीर हम गौने जैबे। तरब कंथ ले तूर बजैबे॥ ५४॥

शब्द ॥ ५४ ॥

नरको दादस देखो आई। कछु अकथ कथ्यो है भाई॥ सिंह शार्दुल एक हर जोतिन। सी· कस बोइनि धाने॥ बनकी भुलइया चाखुर फेरे। छागर भये किसाने॥ छेरी बाघे ब्याह होत है। मंगल गावै गाई॥ बनके रोज धरि दायज दीन्हो। गोहलो कंधे जाई॥ कागा कापर धोवन लागे। बकुला किरपहि दाँते॥ माखी मूण्ड मुडावन लागी। हमहूँ जाब बराते॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो।

जो यह पद अर्थावे ॥ सोई पंडित सोई ज्ञाता । सोई भक्त कहावे ॥ ५५ ॥

शब्द ॥ ५६ ॥

नर को नहीं परतीत हमारी ॥ टेक ॥

झूठा वनिज कियो झूठे सो । पूँजी सवन मिलि हारी ॥ पट दर्शन मिलि पंथ चलायो । त्रिदेवा अधिकारी ॥ राजा देश बड़ो परपंची रैयत रहत उजारी । इतते उत उतते इत रहहू । यमकी सांड सँवारी ॥ ज्यों कपि डोर वांधु वाजी गर । अपनी खुसी परारी ॥ इहे पेट उत्पति परलयका ॥ विषया सबै विकारी ॥ जैसे श्वान अपावन राजी । त्यों लागी संसारी । कहहिं कबीर यह अदबुद ज्ञाना । को मानै वात हमारी ॥ अजहुँ लेहु छुडाय काल सो । जो करे सुरति सँभारी ॥ ५६ ॥

शब्द ॥ ५७ ॥

ना हरि भजसि न आदत छूटी ॥ टेक ॥

शब्दहि समुझि सुधारत नाहीं ॥ आँधर भये

वाकी है वानी । रैन दिवस वेकार चूवै पानी ॥ कहहिं कबीर कछु अछलो न तहियां । हरि विरवा प्रतिपालि न जहिया ॥ ५० ॥

शब्द ॥ ५१ ॥

बुझ २ पंडित मन चितलाय । कबहुँ भरलि बहै कबहुँ सुखाय ॥ खन ऊबै खन डूबै खन औगाह ॥ रतन न मिलै पावै नहिं थाह ॥ नदिया नहिं सासरि बहै नीर । मच्छ न मरै केवट रहै तीर ॥ पोहकर नहिं बाँधल तहँ घाट । पुरइनि नहीं कवल महँ बाट ॥ कहहिं कबीर ई मनका धोख । बैठा रहै चला चहै चोख ॥ ५१ ॥

शब्द ॥ ५२ ॥

बूझ लीजे ब्रह्म ज्ञानी ॥ टेक ॥

घूरि २ वर्षा वर्षावै । परिया बूँद न पानी ॥ चिउँटी के पग हस्ती बाँधो । छेरी बीग रखावै ॥ उदधि माँह ते निकर छांछरी । चौड़े गेह करावै ॥ मेंडुक सर्प रहत इक संगे । बिलया श्वान बियाई ॥

नित उठि सिंघ स्यार सों डरपे। अद्भुत कथ्यो न जाई कौने संशय मृगा वन घेरे। पारथ बाणा मेले॥ उदाधि भूपते तरिवर डाहे। मच्छ अहेरा खेले॥ कहहिं कबीर यह अद्भुत ज्ञाना। को यह ज्ञानहिं बूझै॥ बिनु पंखे उड़ि जाय अकाशै। जीवहि मरण न सूझै॥ ५२॥

शब्द॥ ५३॥

वै बिरवा चीन्हे जो कोय। जरा मरण रहित तन होय। बिरवा एक सकल संसारा॥ पेड़ एक फूटल तीनि डारा॥ मध्य की डारि चारि फल लागा। शाखा पंत्र गिनेको वाका॥ बेलि एक त्रिभुवन लपटानी। बँधे ते छूटै नहिं ज्ञानी॥ कहहिं कबीर हम जात पुकारा। पंडित होय सो लेइ बिचारा॥ ६३॥

शब्द॥ ५४॥

साँई के संग सासुर आई॥ टेक॥

संग न सूति स्वाद न जानी। गयो जोबन

हियेहु की फूटी ॥ पानी माहिं पपाण की रेखा। ठोंकत उठै भभूका ॥ सहस घड़ा नित उठि जब ढारे। फिर सूखे का सूखा ॥ सेतहिं सेत सितंगभो। सैन बाढु अधिकाई ॥ जो सन्निपात रोगियन मारे। सो साधुन सिद्धि पाई ॥ अनहद कहत कहत जग बिनशे। अनहद सृष्टि समानी। निकट पयाना यमपुर धावै ॥ बोलें एकै बानी ॥ सतगुरु मिले बहुत सुख लहिये। सतगुरु शब्द सुधारे ॥ कहहिं कबीर ते सदा सुखी हैं। जो यहि पदहिं बिचारे ॥५७॥

शब्द ॥ ५८ ॥

नरहरि लागि दों बिकार बिन इंधन। मिले न बुझावन हार ॥ मैं जानो तोहीं से ब्यापे। जरत सकल संसार ॥ पानी माहिं अग्नि को अंकुर। जरत बुझावे पानी ॥ एक न जरे जरें नौ नारी। युक्ति न काहू जानी ॥ शहर जरे पहरु सुख सोवें। कहें कुशल घर मेरा ॥ पुरिया जरे वस्तु निज उबरे। बिकल राम रँग तेरा ॥ कुबजा पुरुष गले एक लागा।

पूजि न मनकी सरधा ॥ करत विचार जन्म गौ खीसे । ई तन रहत असाधा ॥ जानि बूझि जो कपट करतु हैं । तेहि अस मंद न कोई ॥ कहहिं कबीर तेहि मूढ़को । भला कौन विधि होई ॥ ५८ ॥

शब्द ॥ ५६ ॥

माया महा ठगनी हम जानी ॥

त्रिगुणी फाँस लिये कर डोले । बोले मधुरी वानी । केशव के कमला ह्वै बैठी । शिव के भवन भवानी ॥ पंडा की मूरति ह्वै बैठी । तीरथहू में पानी ॥ योगी के योगिनि ह्वै बैठी । राजाके घर रानी ॥ काहू के हीरा होय बैठी । काहूके कौड़ी कानी ॥ भक्ता के भक्तिन ह्वै बैठी । ब्रह्मा के ब्रह्मानी ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । ई सब अकथ कहानी ॥५६॥

शब्द ॥ ६० ॥

माया मोह मोहित कीन्हा । ताते ज्ञान रतन हरि लीन्हा ॥ जीवन ऐसो सपना जैसो । जीवन सपन समाना ॥ शब्दगुरु उपदेश दीन्हो । तैं छाड़

परम निधाना ॥ ज्योति देखि पतंग हुलसे । पशु न पेखे आगि ॥ काल फांस नर मुग्ध न चेतहु । कनक कामनी लागि ॥ शेख सय्यद कितेब निरखे । स्मृति शास्त्र विचार ॥ सतगुरु के उपदेश विनु तैं । जानिके जीव मारा॥करु विचार विकार परिहर। तरण तारण सोय ॥ कहहिं कबीर भगवंत भजु नर । दुतिया और न कोय ॥ ६० ॥

शब्द ॥ ६१ ॥

मरिहो रे तन का ले करिहो। प्राण छूटे बाहर ले डरिहो ॥ काया विगुर्चन अनवनी भाँती । कोई जारे कोई गाड़े माटी ॥ हिंदु ले जारे तुरुक ले गाड़े। यहि विधि अंत दुनों घर छाड़े ॥ कर्म फाँस यम जाल पसारा । जस धीमर मछरी गहि मारा ॥ राम विना नर होइ हो कैसा। वाट मांझ गोबरौरा जैसा॥ कहहिं कबीर पाछे पछतैहो। या घरसे जब वा घर जैहो॥

शब्द ॥ ६२ ॥

माई मैं दूनों कुल उज्यियारी ॥ टेक ॥

सासु ननद पटिया मिलि बँधलों । भसुरहिं परलों गारी ॥ जारों माँग मैं तासु नारि की । जिन सरवर रचल धमारी ॥ जना पांच कोखिया मिलि रखलों ॥ और दुई औ चारी ॥ पार परोसिनि करों कलेवा । संगहि बुधि महतारी ॥ सहजै बपुरे सेज बिछावल । सुत लिउँ मैं पाँव पसारी ॥ आवों न जावों मरों नहिं जीवों । साहिब मेंट लगारी ॥ एक नाम मैं निजुकै गहलों । ते छूटल संसारी ॥ एक नाम मैं बदि के लेखों । कहहिं कबीर पुकारी ॥ ६२ ॥

शब्द ॥ ६३ ॥

मैं कासों कहों को सुने को पतियाय । फुलवाके छुवत भँवर मरि जाय ॥ जोतिये न बोइये सींचिये न सोय । बिन डार बिन पात फूल एक होय ॥ गगन मंडल बिच फुल एक फूला । तर भौ डार उपर भौ मूला । फुल भल फूलल मालिनि भल

गाँथल । फुलवा विनसि गो भँवर निरासल ॥ कहहिं कबीर सुनो संतो भाई। पंडित जन फुल रहत लुभाई॥

शब्द ॥ ६४ ॥

जोलहा बीनहु हो हरिनामा । जाके सुर नर मुनि धरे ध्याना ॥ ताना तने को अहुठा लीन्हा । चरखी चारिउ वेदा ॥ सरकुंडी एक रामनरायण । पूरण प्रगटे कामा ॥ भवसागर एक कठवत कीन्हा। तामें मांडी साना ॥ मांडी का तन माँडि रहा है। मांडी विरले जाना ॥ चाँद सूर्य दुई गोडा कीन्हा। मांझ दीप कियो मांझा ॥ त्रिभुवन नाथ जो मांजन लागे । श्याम मुररिया दीन्हा ॥ पाईके जब भरना लीन्हा । वय बाँधन को रामा॥ वय भरा तिहुँलोकहिं बाँधे । कोई न रहत उवाना ॥ तीन लोक एक करिगह कीन्हो । दिग मग कीन्हों ताना ॥ आदि पुरुष बैठावन बैठे । कबिरा ज्योति समाना ॥ ६४ ॥

शब्द ॥ ६५ ॥

योगिया फिरि गयो नगर मँझारी । जाय

समान पांच जहां नारी ॥ गयउ देशांतर कोई न वतावे । योगिया वहुर गुफा नहिं आवे ॥ जरि गयो कंथा धजा गई टूटि । भजि गयो डंड खपर गयो फूटि ॥ कहहिं कबीर यह कलि है खोटी । जो रहे करवा सो निकरे टोटी ॥ ६५ ॥

शब्द ॥ ६६ ॥

योगिया के नगर बसो मत कोई । जो रे बसे सो योगिया होई ॥ ये योगिया को उलटा ज्ञान । काला चोला नहीं वाके म्यान ॥ प्रगट सो कंथा गुप्ताधारी । तामें मूल सजीवन भारी ॥ वो योगिया की युक्ति जो बूझै । राम रमै तेहिं त्रिभुवन सूझै । अमृत वेली छिन छिन पीवै । कहें कबीर योगी युग २ जीवै ॥६६॥

शब्द ॥ ६७ ॥

जो पै बीज रूप भगवान । तो पंडित का पूछो आन ॥ कहँ मन कहँ बुद्धि कहँ हंकार । सत रज तम गुण तीन प्रकार ॥ विप अमृत फल फलें अनेका ।

बहुधा वेद कहे तरबे का ॥ कहहिं कबीर तैं मैं क्या जान । को धौं छूटल को अरुझान ॥ ६७ ॥

शब्द ॥ ६८ ॥

जो चरखा जरि जाय बढ़ैया न मरे ॥ मैं काँतों सूत हजार । चरखुला जिन जरे ॥ बाबा मोर ब्याह कराव । अच्छा बरहि तकाव ॥ जौलों अच्छा वर ना मिले । तौ लौं तुमहिं बियाहु ॥ प्रथमे नगर पहुँचते । परिगो सोग संताप । एक अचंभव हम देखा । जो बिटिया ब्याहिल बाप॥समधी के घर समधी आये । आये बहुके भाय ॥ गोड़े चूल्हा दै दै । चरखा दियो दृढ़ाय ॥ देवलोक मरि जायँगे । एक न मरे बढ़ाय ॥ यह मन रंजन कारणे । चरखा दियो दृढ़ाय ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतों । चरखा लखे जो कोय ॥ जो यह चरखा लखि परे । ताको आवागवन न होय ॥ ६८ ॥

शब्द ॥ ६९ ॥

जंत्री जंत्र अनूपम बाजे । बाके अष्ट गगन

मुख गाजे ॥ तूही बाजे तूहि गाजे । तूहि लिये कर डोले ॥ एक शब्द मों राग छतीसों । अन हद बानी बोले ॥ मुख को नाल श्रवण को तुंबा । सत गुरु साज बनाया । जिभ्या के तार नासिका चरई । माया का मोम लगाया ॥ गगन मंडल में भया उजियारा । उलटा फेर लगाया ॥ कहँहि कबीरजन भये विवेकी । जिनजंत्री सों मनलाया ॥

शब्द ॥ ७० ॥

जस मास पशुकी तस मास नरकी । रुधिर रुधिर एक सारा जी ॥ पशुका मास भखें सब कोई । नरहिं न भखें सियारा जी । ब्रह्म कुलाल मेदिनी भइया । उपजि बिनसि कित गइया जी ॥ मास मछरिया तैं पै खइया । ज्यों खेतन मों बोइया जी ॥ माटी के करि देवी देवा । काटि काटि जिव देइया जी ॥ जो तुहरा हैं सांचा देवा । खेत चरत क्यों न लेइया जी ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । राम नाम

नित लेइया जी॥ जो कछु कियहु जिभ्या के स्वारथ। बदल पराया दइया जी॥ ७०॥

शब्द ॥ ७१ ॥

चातृक कहाँ पुकारो दूरी। सो जल जगत रहा भर पूरी॥ जेहि जल नाद विंदको भेदा। षट कर्म सहित उपानेउ वेदा। जेहि जल जीव शीवको वासा। सो जल धरणी अमर प्रकाशा। जेहि जल उपजल सकल शरीरा। सो जल भेद न जानु कबीरा॥

शब्द ॥ ७२ ॥

चलहु का टेढ़ो टेढ़ो टेढ़ो।

दशहूँ द्वार नर्क भरि वूड़े। तू गंधी को वेडो॥ फूटे नैन हृदय नहिं सूझे। मति एको नहिं जानी॥ काम क्रोध तृष्णा के माते। वूड़ि मुये विन पानी॥ जो जारे तन भस्म होय धुरि। गाड़े क्रमि कीट खाई॥ सीकर श्वान काग का भोजन। तन की ईहै बड़ाई॥ चेति न देखु मुग्ध नर बौरे। तोहिते काल न दूरी॥ कोटिक जतन करो यह

तनका। अंत अवस्था धूरी ॥ बालू के घरवा में बैठे। चेतत नाहिं अयाना॥ कहहिं कबीर एक राम भजे बिनु। बूड़े बहुत सयाना ॥ ७२ ॥

शब्द ॥ ७३ ॥

फिरहु का फूले फूले फूले।

जब दश मास ऊर्ध मुख होते ॥ सो दिन काहेक भूले। ज्यों माखी सहते नहिं बिहुरे ॥ सोचि सोचि धन कीन्हा ॥ मुये पीछे लेहु लेहु करें सब। भूत रहनि कस दीन्हा ॥ देहरि लौं वर नारि संग है। आगे संग सुहेला॥ मृतक थान लौं संग खटोला। फिर पुनि हंस अकेला ॥ जारे देह भस्म ह्वै जाई। गाड़े माटी खाई ॥ कांचे कुंभ उदक ज्यों भरिया। तनकी इहै बड़ाई ॥ राम न रमसि मोहके माते। परेहु कालवश कूवा ॥ कहहिं कबीर नर आपु बँधायो। ज्यों नलिनी भ्रम सूवा ॥ ७३ ॥

शब्द ॥ ७४ ॥

ऐसो योगिया बदकर्मी। जाके गमन आकाश

न धरणी ॥ हाथ न वाके पांव न वाके । रूप न वाके रेखा ॥ विना हाट हटवाई लावे । करे वयाई लेखा ॥ कर्म न वाके धर्म न वाके । योग न वाके युक्ती ॥ सींगी पात्र किछउ नहिं वाके । काहे को माँगे मुक्ती ॥ मैं तोहिं जाना तैं मोहिं जाना । मैं तोहिं माहिं समाना ॥ उत्पाति परलय एकहू न होते । तव कहु कौन ब्रह्म को ध्याना ॥ जोगी आन एक ठाढ़ कियो है । राम रहा भरपूरी ॥औषध मूल किछउ नहिं वाके । राम सजीवन मूरी ॥ नट-वट वाजा पेखनी पेखे । वाजीगर की वाजी ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । भई सो राज विराजी ॥७४॥

शब्द ॥ ७५ ॥

ऐसो भरम विगुर्चन भारी ।

वेद किताब दीन औ दोज़ख । को पुरुषा को नारी ॥ माटी का घट साज बनाया । नादे विंद समाना ॥ घट विनसे क्या नाम धरहुगे । अहमक खोज भुलाना॥एकै त्वचा हाड मल मूत्रा।एक रुधिर

एक गूदा ॥ एक बूँद से शृष्टि रची है। को ब्राह्मण को शूद्रा । रजो गुण ब्रह्मा तमोगुण शंकर । सतोगुणी हरि होई ॥ कहहिं कबीर रामरमि रहिये। हिंदू तुरुक न कोई ॥ ७५ ॥

शब्द ॥ ७६ ॥

आपुनपौ आपही बिसरचो ।

जैसे श्वान कांच मंदिर में । भरमित भूकि मरयो ॥ ज्यों केहरि वपु निरखि कूप जल । प्रतिमा देखि परयो ॥ वैसेही गज फटिक शिला में । दशनन आनि अरयो ॥ मर्कट मूठि स्वाद नहिं बिहुरे। घर घर रटत फिरयो ॥ कहहिं कबीर नलिनी के सुवना । तोहि कौन पकरयो ॥ ७६ ॥

शब्द ॥ ७७ ॥

आपन आस कीजै बहुतेरा । काहु न मर्म पावल हरि केरा ॥ इन्द्री कहाँ करे बिश्रामा । सो कहाँ गये जो कहत हते रामा ॥ सो कहाँ गये जो होत सयाना ॥ होय मृतक वहि पदहिं समाना ॥

रामानंद रामरस माते। कहहिं कबीर हम कहि कहि थाके ॥ ७७ ॥

शब्द ॥ ७८ ॥

अब हम जानिया हो हरिबाजी को खेल ॥ डंक बजाय देखाय तमासा। बहुरि लेत सकेल ॥ हरि बाजी सुरनर मुनि जहँडे। माया-चाटक लाया ॥ घरमें डारि सकल भरमाया। हृदया ज्ञान न आया ॥ बाजी झूठ बाजीगर साँचा। साधुनकी मति ऐसी ॥ कहहिं कबीर जिन जैसी समुझी। ताकी गति भइ तैसी ॥ ७८ ॥

शब्द ॥ ७६ ॥

कहहु अंमर कासो लागा। चेतनहारा चेत सुभागा ॥ अंमर मध्ये दीसे तारा। एक चेता एक चेतवन हारा ॥ जो खोजो सो उहवाँ नाहीं। सोतो आहि अमर पद मांहीं ॥ कहहिं कबीर पद बूझे सोई। मुख हृदया जाके एकै होई ॥

शब्द ॥ ८० ॥

बंदे करिले आपु निवेरा ।

आपु जियत लखु आपु ठौर करु । मुये कहां घर तेरा ॥ यहि औसर नहिं चेतहु प्राणी । अंत कोइ नहिं तेरा ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो ॥ कठिन कालको घेरा ॥ ८० ॥

शब्द ॥ ८१ ॥

ऊतो रहु ररा ममा की भाँति हो । सब संत उधारन चूनरी ॥ वालमीक बन बोइया । चुनि लीन्हा शुकदेव ॥ कर्म बिनौरा होई रहा । सूत काते जैदेव ॥ तीनिलोक ताना तनो । है ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ नाम लेत मुनि हारिया । सुरपति सकल नरेश ॥ विष्णू जिभ्या गुण गाइया । बिनु बस्ती का देश ॥ सुने घर का पाहुना । तासों लाइनि हेत ॥ चारि वेद कैडा कियो । निराकार कियो राछ ॥ बिने कबीरा चूनरी । मैं नहिं बांध लबारि ॥ ८१ ॥

शब्द ॥ ८२ ॥

तुम यहि विधि समुझो लोई। गोरी मुख मंदिर बाजे ॥ एक सगुण पट चक्रहिं वेधे। बिना वृषभ कोल्हू माचै ॥ ब्रह्महिं पकरि अगिनमा होमै। मच्छ गगन चढ़ि गाजा ॥ नित अमावस नित ग्रहन होई। राहु ग्रसे नित दीजे ॥ सुरभी भक्षण करत वेद मुख। घन बर्से तन छीजे ॥ त्रिकुटी कुंडल मध्ये मंदिर बाजे। औघट अंमर छीजै ॥ पुहुमिका पनियां अंमर भरिया। ई अचरज कोई बूझै ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो। योगिन सिद्धि पियारी ॥ सदा रहे सुख संजम अपने। वसुधा आदि कुमारि ॥ ८२ ॥

शब्द ॥ ८३ ॥

भूला वे अहमक नादाना। जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना ॥ वरवस आनि के गाय पछारिन। गराकाटि जीव आपु लिया ॥ जीयत जी मुरदा करि डारे। तिसको कहत हलाल हुआ ॥ जाहि

माखु को पाक कहतु हो । ताकी उत्पति सुन भाई ॥ रज वीर्यसे मास उपानी । सो मास नपाकि तुम खाई ॥ अपनी देखि कहत नहिं अहमक । कहत हमारे बड़न किया । उसकी खून तुम्हारी गर्दन । जिन्ह तुमको उपदेश दिया ॥ स्याही गई सुफेदी आई । दिल सफेद अजहूँ न हुआ ॥ रोजा वांग निमाज क्या कीजै । हुजरे भीतर पैठि मुवा ॥ पंडित वेद पुराण पढ़े सब । मुसलमान कुराना ॥ कहहिं कबीर दोऊ गये नर्कमें । जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना ॥ ८३ ॥

शब्द ॥ ८४ ॥

काजी तुम कौन कतेब बखानी ।

झंकत बकत रहहु निशि बासर । मति एकौ नहिं जानी ॥ शक्ति अनुमाने सुन्नति करहु हो । मैं न बदों गा भाई ॥ जो खुदाय तेरि सुन्नति करतु है । आपुहि कटि क्यों न आई ॥ सुन्नति कराय तुरुक जो होना । औरत को क्या कहिये ॥ अर्ध शरीरी नारि बखानी । ताते हिंदू रहिये ॥ पहिरि

जनेउ जो ब्राह्मण होना । मेहरी क्या पहिराया ॥ वो जन्म की शूद्रिन परसै । तुम पांडे क्यों खाया ॥ हिन्दू तुरुक कहाँते आया । किन यह राह चलाया ॥ दिल में खोंज देखु खोजादे । बिहिस्त कहां ते आया ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । जोर करतु हैं भाई ॥ कबीरन ओट रामकी पकरी । अंत चले पछताई ॥ ८४ ॥

शब्द ॥ ८५ ॥

भूला लोग कहैं घर मेरा ।

जा घरमें तू भूला डोले । सो घर नाहीं तेरा ॥ हाथी घोड़ा बैल बाहना । संग्रह किये घनेरा ॥ वस्तीमासे दियो खेदरा । जंगल कियो बसेरा ॥ गांठि बांधि खर्च नहिं पठवो । बहुरि न कीयो फेरा ॥ बीबी बाहर हरम महल में । बीच मियां का डेरा ॥ नौ मन सूत अरुझि नहिं सुरझै । जन्म २ अरुझेरा ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो । यह पद का करहु निबेरा ॥

शब्द ॥ ८६ ॥

कबिरा तेरो घर कंदला में। यह जग रहत भुलाना। गुरुकी कही करत नहिं कोई। अमहल महल दिवाना। सकल ब्रह्ममों हंस कबीरा काग न चोंच पसारा॥ मन्मथ कर्म धरे सब देही। नाद बिंद बिस्तारा॥ सकल कबीरा बोले बानी। पानी में घर छाया॥ अनन्त लूट होती घट भीतर। घटका मर्म न पाया॥ कामिनी रूपी सकल कबीरा। मृगा चरिंदा होई॥ बड़ बड़ ज्ञानी मुनिवर थाके। पकरि सके नहिं कोई॥ ब्रह्मा बरुण कुबेर पुरंदर। पीपा औ प्रहलादा॥ हिरणाकुश नखबोद्र बिदारा। तिन्हको कालन राखा॥ गोरख ऐसो दत्त दिगम्बर। नामदेव जैदेव दासा॥ तिनकी खबर कहत नहिं कोई (उन्ह) कहाँ कियो हैं बासा॥ चौपर खेल होत घट भीतर। जन्मका पासा डारा॥ दम दमकी कोई खबरि न जाने। करि न सके निरुवारा॥ चारि

दंग महिमंडल रच्यो है । रुम शाम बिच डिल्ली ॥ तेहि ऊपर कछु अजब तमाशा । मारो है यम किल्ली ॥ सकल अवतार जाके महि मंडल । अनंत खड़ा कर जोरे ॥ अदबुद अगम औगाह रच्यो है । ई सब शोभा तेरे ॥ सकल कबीरा बोले बीरा । अजहू हो हुशियारा । कहहिं कबीर गुरु सिकली दर्पण । हरदम करहिं पुकारा ॥

शब्द ॥ ८७ ॥

कबिरा तेरो बन कंदला में । मानु अहेरा खेलै ॥ बफुवारी आनंद मृगा । रुचि रुचि सर मेलै ॥ चेतत रावल पावन खेडा । सहजै मूल बांधे ॥ ध्यान धनुष ज्ञान बाण । जोगेश्वर साधे ॥ षट चक्र बेधि कमल बेधि । जाय उजियारी कीन्हा ॥ काम क्रोध लोभ मोह । हांकि सावज दीन्हा ॥ गगन मध्ये रोकिन द्वारा । जहां दिवस नहिं राती दास कबीरा जाय पहुँचे । बिछुरे संग रु साथी ॥ ८७ ॥

शब्द ॥ ८८ ॥

सावज न होई भाई सावज न होई। वाकी माँसु भखे सब कोई॥ सावज एक सकल संसारा। अवगति वाकी वाता॥ पेट फाड़ जो देखियरे भाई। आहि करेज न आँता। ऐसी वाकी मांसुरे भाई। पल २ मांस बिकाई। हाड़ गोड़ ले घूर पवाँरिनि। आगि धुवाँ नहिं खाई॥ शीर सींग किछुवो नहीं वाके। पूँछ कहा वै पावें॥ सब पंडित मिलि धंधे परिया। कबिरा बनोरी गावें॥ ८८॥

शब्द ॥ ८९ ॥

सुभागे केहि कारण लोभ लागे। रतन जन्म खोयो॥ पूर्व जन्म भूमि कारण। वीज काहेक वोयो॥ बुंद से जिन्ह पिंड संजोयो। अग्नि कुंड रहाया॥ जब दश मास माता के गर्भे। बहुरि लागल माया॥ वारहु ते पुनि वृद्ध हुवा। होनहार सो हुवा॥ जब यम अयहैं बाँधि चलय हैं। नैनन भरि भरि रोया॥ जीवन की जनि आसा राखो

काल धेरे हैं श्वासा॥बाजी है संसार कबीरा । चित चेति डारो पांसा ॥ ८९ ॥

शब्द ॥ ९० ॥

संत महंतो सुमिरो सोई । जो काल फाँस ते वंचा होई ॥ दत्तात्रेय मर्म नहिं जाना । मिथ्या साधु भुलाना ॥ सलिल मथि घृतकै कादिन । ताहि समाधि समाना ॥ गोरख पवन राखि नहिं जाना । योग युक्ति अनुमाना ॥ रिद्धि सिद्धि संजम बहु तेरा । पार ब्रह्म नहिं जाना ॥ वशिष्ठ श्रेष्ठ विद्या संपूरण । राम ऐसे शिष्य शाखा ॥ जाहि रामको कर्ता कहिये । तिनहुँ को काल न राखा ॥ हिंदू कहें हमहिं ले जारों । तुरुक कहैं हमारो पीर ॥ दोऊ आय दीन में झगरें । ठाढ़े देखै हंस कबीर ॥ ९० ॥

शब्द ॥ ९१ ॥

तन धरि सुखिया काहु न देखा । जो देखा जो दुखिया॥ उदय अस्तकी बात कहत है । सबको

किया विवेका ॥ बाटे बाटे सब कोइ दुखिया । क्या गेही बैरागी ॥ शुक्राचार्य दुखहि के कारण । गर्भहि माया त्यागी ॥ योगी जंगम ते अति दुखिया । तापस के दुख दूना ॥ आशा तृष्णा सब घट व्यापी । कोई महल नहिं सूना । सांच कहौं तो सब जग खीजे । झूठ कहा ना जाई ॥ कहहिं कबीर तेई भौ दुखिया । जिन्ह यह राह चलाई ॥ ९१ ॥

शब्द ॥ ९२ ॥

ता मनको चीन्हो मोरे भाई । तन छूटे मन कहां समाई ॥ सनक सनंदन जैदेवनामा । भक्ति हेतु मन उनहुँ न जाना ॥ अंबरीष प्रहलाद सुदामा । भक्ति सही मन उनहुँ न जाना ॥ भरथरी गोरख गोपी चंदा । ता मन मिलि २ कियो अनंदा ॥ जा मनको कोइ जानु न भेवा तामन मगन भये शुकदेवा ॥ शिव सनकादिक नारद शेषा । तनके भीतर मन उनहुँ न पेखा ॥ येकल निरंजन सकल शरीरा । तामहँ भ्रमि भ्रमि रहल कबीरा ॥ ९२ ॥

शब्द ॥ ६३ ॥

बाबू ऐसो है संसार तिहारो । ईहै कलि व्योहारो ॥ को अब अनुख सहत प्रतिदिनको । नाहिं न रहनि हमारो ॥ सुम्रति सोहाय सबै कोइ जाने । हृदया तत्व न बूझै ॥ निर्जिव आगे सजिव थापे लोचन किछउ न सूझै ॥ तजि अमृत विप काहिको अँचवे । गाँठी बाँधिनि खोटा ॥ चोरन दीन्हा पाट सिंहासन । साहुन से भौ ओटा ॥ कहहिं कबीर झूठे मिलि झूठा । ठगही ठग व्योहारा तीनि लोक भरपूर रहा है । नाहीं है पतियारा ॥ ६३ ॥

शब्द ॥ ६४ ॥

कहो हो निरंजन कौने बानी ।

हाथ पाँव मुख श्रवण जिभ्या नहिं । काकहि जपहु हो प्रानी ॥ ज्योतिहि ज्योति ज्योति जो कहिये । ज्योंति कौन सहिदानी ॥ ज्योतिहि ज्योति ज्योति दे मारे । तब कहाँ ज्योति समानी ॥ चारि वेद ब्रह्मा जो कहिया । उनहुँ न या गति जानी॥

कहहिं कबीर सुनो हो संतो। बूझो पंडित ज्ञानी॥९४॥

शब्द ॥ ९५ ॥

को अस करे नगरकोट वलिया। मासु. फैलाय गिद्ध रखवरिया ॥ मूस भौ नाव मंजार कंडिहरिया सोवे दादुर सर्प पहरिया। बैल बियाय गाय भई बंझा। बछरू दुहिये तीनि २ संझा ॥ नित उठ सिंह स्यार सो जूझै। कबिरा का पद जन बिरला बूझै९५॥

शब्द ॥ ९६ ॥

काको रोवौं गैल बहुतेरा। बहुतक मुवल फिरल नहिं फेरा॥जब हम रोया तब तुम न संभारा। गर्भ वासकी बात विचारा ॥ अब तैं रोया क्या तैं पाया। केहि कारण अब मोहिं रोवाया ॥ कहहिं कबीरसुनो संतो भाई। काल के बसि परो मति कोई ॥

शब्द ॥ ९७ ॥

अल्लह राम जीव तेरी नाई। जिन्ह पर मेहर होहु तुम साईं ॥ क्या मुंडी भुईं शिर नाये। क्या जलदेह नहाये ॥ खून करे मिस्कीन कहाये।

अवगुण रहे छिपाये ॥ क्या वजू·जप मंजन कीये। क्या मसजिद शिरनाथे ॥ हृदया कपट निमाज गुजारे। क्या हज मक्के जाये ॥ हिंदू वरत एकादसि चौविस। तीस रोजा मुसलमाना ॥ ग्यारह मास कहो किन टारे। एक महीना आना ॥ जो खुदाय मसजीद वसतु है। और मुलक केहिकेरा ॥ तीरथ मूरत राम निवासी दुइमा किनहुँ न हेरा ॥ पूरब दिशा हरीको बासा। पश्चिम अल्लाह मुकामा ॥ दिलमें खोजि दिलहिं मां खोजो। इहै करीमा रामा ॥ वेदकितेव कहो किन झूठा। झूठा जो न विचारे ॥ सबघट एक एकके लेखे। भय दूजाके मारे ॥ जेते औरत मर्द उपाने। सो सब रूप तुम्हारा ॥ कबीर पोंगरा अल्लाहरामका। सो गुरु पीर हमारा ॥ ९७ ॥

शब्द ॥ ९८ ॥

आव ने आव मुझे हरिको नाम। और सकल तजु कौने काम ॥ कहँ तव आदम कहँ तव हव्वा। कहाँ तव पीर पैगम्बर हुवा ॥ कहाँ तव

जिमी कहाँ असमान । कहाँ तव वेद कितेब कुरान जिन्ह दुनियाँ में रची मसजीद । झूठा रोजा झूठी ईद ॥ सांचा एक अल्लाह को नाम । जाको नय नय करो सलाम ॥ कहुँ धौ विहिस्त कहाँ ते आई किसके कहे तुम छूरी चलाई॥ कर्ता किरतम बाजी लाई । हिन्दू तुरुक की राह चलाई॥ कहाँ तव दिवस कहाँ तव राती । कहाँ तव किरतम किन उत्पाती ॥ नहिं वाके जाति नहीं वाके पांती ॥ कहहिं कबीर वाकी दिवस न राती ॥ ९८ ॥

शब्द ॥ ९९ ॥

अब कहाँ चलेउ अकेले मीता । उठहु न करहु घरहु की चिंता॥ खीर खांड़ घृत पिंड सँवारा। सोतन लै बाहर कै डारा ॥ जो सिर रचि २ बाँधहु पागा । सो सिर रतन बिडारत कागा ॥ हाड़ जरे जस जंगल लकड़ी । केश जरे जैसे घासकी पूली॥ आवत संग न जात संगाती। काह भये दल बाँधल हाथी ॥ माया के रस लेन न पाया । अंतर यम बिलारि है धाया॥ कहहिं कबीर नर अजहुँ न जागा

यमका मुगदर माँझ सिर लागा ॥ ६६ ॥

शब्द ॥ १०० ॥

देखउ लोग हरि केर सगाई। माया धरि पुत्र धियेउ संग जाई॥ सासु ननदि मिलि अचल चलाई। मँदरिया गृह बैठी जाई॥ हम बहनोई राम मोर सारा। हमहिं बाप हरि पुत्र हमारा॥ कहहिं कबीर ये हरि के बूता। राम रमे ते कुकुरि के पूता॥

शब्द ॥ १०१ ॥

देखि २ जिय अचरज होई। यह पद बूझै विरला कोई॥ धरती उलटि अकासैं जाय। चिउँटी के मुख हस्ति समाय। विना पवन सो पर्वत उड़े। जीव जंतु सब वृक्षा चढ़े॥ सूखे सरवर उठे हिलोरा। बिन जल चकवा करत किलोरा। बैठा पंडित पढ़ै पुरान। विन देखे का करत बखान॥ कहहिं कबीर यह पदको जान। सोई संत सदा परमान॥१०१॥

शब्द ॥ १०२ ॥

होदारी के ले देउँ तोहि गारी। तैं समुझि

सुपंथ विचारी ॥ घरहु के नाह जो अपना । तिनहुँ से भेट न सपना ॥ ब्राह्मण क्षत्री बानी । तिनहुँ कहल नहिं मानी ॥ योगी जगमें जेते । आपु गहे हैं तेते ॥ कहहिं कबीर एक योगी । वो तो भर्मि भर्मि भौ भोगी ॥ १०२ ॥

शब्द ॥ १०३ ॥

लोगा तुमहिं मति के भोरा ।

ज्यों पानी पानी मिलि गयऊ । त्यों धूरि मिला कबीरा ॥ जो मैथिलको साँचा व्यास तोहर मरण होय मगहर पास ॥ मगहर मरे मरन नहिं पावे । अंते मरै तो राम लजावे ॥ मगहर मरे सो गदहा होय ॥ भल परतीत राम सो खोय ॥ क्या काशी क्या मगहर ऊसर । जोपै हृदय राम बसे मोर ॥ जो काशी तन तजे कबीरा । ता रामहिं कौन निहोरा ॥ १०३ ॥

शब्द ॥ १०४ ॥

कैसे तरो नाथ कैसे तारो । अब बहु कुटिल

भरो ॥ कैसी तेरी सेवा पूजा कैसो तेरो ध्यान । उपर उजल देखो बग अनुमान ॥ भाव तो भुजंग देखो अति बिबिचारी । सुरति सचान तेरी मति तो मंजारी ॥ अतिरे बिरोधी देखो अतिरे सयाना । छौ दर्शन देखो भेष लपटाना ॥ कहहिं कबीर सुनो नर बंदा । डाइनि डिंभ सकल जग खंदा ॥१०४॥

शब्द ॥ १०५ ॥

ये भ्रम भूत सकल जग खाया । जिन जिन पूजा तिन जहँडाया ॥ अंड न पिंड न प्राण न देही । काटि २ जिव कौतुक देही ॥ बकरी मुरगी कीन्हेउछेवा । आगल जन्म उन्ह औसर लेवा ॥ कहहिं कबीर सुनो नर लोई । भुतवा के पुजले भुतवा होई ॥ १०५ ॥

शब्द ॥ १०६ ॥

भँवर उड़े बग बैठे आये । रैन गई दिवसो चलि जाये ॥ हल हल काँपे बाला जीऊ । ना जाने का करिहैं पीऊ ॥ काँचे बासन टिके न पानी ।

उड़ि गये हंस काया कुम्हिलानी ॥ काग उड़ावत भुजा पिरानी । कहहिं कबीर यह कथा सिरानी१०७

शब्द ॥ १०७ ॥

खसम बिनु तेली को बैल भयो ।

बैठत नाहिं साधुकी सङ्गतानाधे जन्म गयो ॥ वहि वहि मरहु पचहु निज स्वारथ । यमको दंड सह्यो ॥ धन दारा सुत राज काज हित । माथे भार गह्यो ॥ खसमहिं छाँड़ि विषय संग रातेव । पाप के बीज बोयो । झूठी मुक्ति नर आस जीवन की । उन्ह प्रेत को जूँठ खयो ॥ लख चौरासी जीव जंतु में । सायर जात बह्यो॥कहहिं कबीर सुनो हो संतो। उन्ह श्वानों की पूँछ गह्यो ॥ १०७ ॥

शब्द ॥ १०८ ॥

अब हम भैलि बहुरि जल मीना । पूर्व जन्म तपका मद कीन्हा। तहिया मैं अछलेउँ मन बैरागी॥ तजलेउँ लोग कुटुम राम लागी तजलेउँ मैं काशी मति भई भोरी । प्राण नाथ कहु का गति मोरी ॥

हमहिं कुसेवक कि तुमहिं अयाना । दुइमा दोष काहि भगवाना ॥ हम चलि अइली तुम्हरे शरणा । कितहुँ न देखों हरिजी के चरणा । हम चलि अइली तुम्हारे पासा । दास कबीर भल कैल निरासा १०८

शब्द ॥ १०६ ॥

लोग बोले दूरि गये कबीर । ये मति कोई कोई जानेगा धीर ॥ दशरथ सुत तिहुँ लोकहि जाना । राम नाम का मर्म है आना ॥ जेहि जीव जानि परा जस लेखा ॥ रजु का कहे उरग सम पेखा ॥ यद्यपि फल उत्तम गुणजाना । हरि छोड़ि मन मुक्तिउन माना ॥ हरि अधार जस मीनहिं नीरा ॥ और जतन कछु कहैं कबीरा ॥ १०६ ॥

शब्द ॥ ११० ॥

आपन कर्म न मेटो जाई ।

कर्मका लिखा मिटै धों कैसे । जो युग कोटि सिराई ॥ गुरु बसिष्ठ मिलि लगन सुधायो । सूर्य मंत्र एक दीन्हा । जो सीता रघुनाथ बिआही ।

पल एक संच न कीन्हा ॥ तीन लोक के कर्ता कहिये । वालि वधो वरिआई ॥ एक समय ऐसी वनि आई । उनहूँ औसर पाई ॥ नारद मुनिको वदन छिपायो । कीन्हो कपिको स्वरूपा ॥ शिशुपाल की भुजा उपारी । आप भयो हरि ठूठा ॥ पार्वती को वाँझ न कहिये । ईश्वर न कहिये भिखारी ॥ कहहिं कबीर कर्ता की बातें । कर्म की बात नियारी ॥ ११० ॥

शब्द ॥ १११ ॥

है कोई गुरु ज्ञानी । जगत उलटि वेद बूझै॥ पानी में पावक वरे । अंधहिं आँखि न सूझै ॥ गाई तो नाहर खायो । हरिन खायो चीता ॥ काग लंगर फाँदिके । वटेर बाज जीता ॥ मूस तो मंजार खायो । स्यार खायो श्वाना ॥ आदि कोउ देश जाने । तासु बेस बाना ॥ एकहिं दादुर खायो । पाँचहिं भुवंगा ॥ कहहिं कबीर पुकारिके । हैं दोऊ यक संगा ॥ १११ ॥

शब्द ॥ ११२ ॥

झगरा एक बढ़ो राजा राम। जो निरुवारे सो निर्वान ॥ ब्रह्म बड़ा कि जहाँ से आया। वेद बड़ा कि जिन्ह उपजाया॥ ई मन बड़ा कि जेहि मन माना। राम बड़ा की रामहिं जाना॥ भ्रमि भ्रमि कबिरा फिरे उदास। तीर्थ बड़ा कि तीर्थ का दास॥ ११२ ॥

शब्द ॥ ११३ ॥

झूठेहि जनि पतियाउ हो। सुनु सन्त सुजाना॥ तेरे घटही में ठगपूर है। मति खोवहु अपाना॥ झूठे की मंडान है। धरती अस माना॥ दशहुँ दिशा वाकी फंद है। जीव घेरे आना॥ योग जप तप संयमा। तीरथ व्रत दाना॥ नौधा वेद कितेब हैं। झूठे का बाना॥ काहु के वचनहिं फूरे। काहु करामाती॥ मान बड़ाई ले रहे। हिंदू तुरुक जाती॥ बात व्योंते अस्मान की। मुदित नियरानी॥ बहुत खुदी दिल राखते। बूड़े बिनु पानी॥ कहहिं

कबीर कासो कहों । सकलो जग अंधा ॥ साँचे से भागा फिरै झूठे का बंदा ॥ ११३ ॥

शब्द ॥ ११४ ॥

सार शब्द से बाँचि हो । मानहु इतवारा हो॥ आदि पुरुष एक वृक्ष है । निरंजन डारा हो ॥ त्रिदेवा शाखा भये । पत्र संसारा हो ॥ ब्रह्मा वेद सही कियो । शिव योग पसारा हो ॥ विष्णु माया उत्पत कियो । ई उरले व्योहारा हो ॥ तीनि लोक दशहूँ दिशा । यम रोकिन द्वारा हो ॥ कीर भये सब जीयरा । लिये विषय का चारा हो ॥ ज्योति स्वरूपी हाकिमी । जिन्ह अमल पसारा हो ॥ कर्म की बन्सी लाय के । पकरो जग सारा हो ॥ अमल मिटावो तासुका । पठवों भव पारा हो ॥ कहहिं कबीर निर्भय करों । परखो टकसारा हो ॥११४॥

शब्द ॥ ११५ ॥

संतो ऐसी भूल जगमाहीं । जाते जीव मिथ्या में जाहीं ॥ पहिले भूले ब्रह्म अखंडित ।

झाँई आपुहि मानी ॥ झाई में भूलत इच्छा कीन्ही इच्छाते अभिमानी ॥ अभिमानी कर्ता ह्वै बैठे। नाना ग्रन्थ चलाया ॥ वोही भूल में सब जग भूला भूलका मर्म न पाया॥ लख चौरासी भूलते कहिये। भूलते जग विटमाया॥ जो है सनातन सोई भूला। अब सो भूलहिं खाया ॥ भूल मिट गुरु मिले पारखी। पारख देहि लखाई ॥ कहहिं कबीर भूल की औषध। पारख सब की भाई ॥

ज्ञान चौंतीसा।

ॐ कार आदि जो जाने। लिखि के मेटै ताहि सो माने ॥ ॐ कार कहैं सब कोई ॥ जिन्ह यह लखा सो बिरला होई ॥ कका कँवल किर्ण मों पावे। शशि विकसित संपुट नहिं आवे ॥ तहाँ कुसुम रंग जो पावे। औगह गहिके गगन रहावे ॥ १॥ खखा चाहै खोरि मनावे। खसमहिं छाड़ि दहों दिशिधावे ॥ खसमहिं छाड़ि छिमा ह्वो रहिये। होय न खीन अक्षय पद लहिये ॥ २ ॥ गगा

गुरुके वचनहिं मान। दूसर शब्द करो नहिं कान॥ तहाँ विहंगम कबहुँ न जाई। औगह गहिके गगन रहाई॥ ३॥ घघा घट बिनसे घट होई। घटही में घट राखु समोई॥ जो घट घटे घटहिं फिरि आवे। घटही में फिर घटहि समावे॥ ४॥ ङङा निरखत निशदिन जाई। निरखत नैन रहे रतनाई॥ निमिष एक जो निरखै पावै। ताहि निमिष में नैन छिपावे॥ ५॥ चचा चित्र रचो बड़ भारी। चित्र छोड़ि तैं चेतु चित्रकारी॥ जिन्ह यह चित्र विचित्र है खेला। चित्र छोड़ि तैं चेतु चितेला॥६॥ छछा आहि छत्रपति पासा। छकि किन रहहु. मेटि सब आसा॥ मैं तोही छिन छिन समुझावा। खसम छाड़ि कस आपु बँधावा॥ ७॥ जजा ई तन जियत न जारो। जौवन जारि युक्ति तन पारो॥ जो कछु युक्ति जानि तन जेरे। ई घट ज्योति उजियारी करे॥ ८॥ झझा अरुझि सरुझि कित जान। अरुझनि हींडत जाय परान॥ कोटि सुमेर

ढूढ़ि फिरि आवै। जो गढ़ गढ़े गढ़ैया सो पावै॥६॥ ञञा निग्रह से करु नेहू। करु निरुवार छाँड़ संदेहू॥ नहिं देखे नहिं भाजिया। परम सयानपयेहू॥ जहाँ न देखि तहाँ आपु भजाऊ॥ जहाँ नहीं तहाँ तन मन लाऊ॥ जहाँ नहीं तहाँ सब कुछ जानी जहाँ है तहाँ ले पहिचानी॥ १० ॥ टटा विकट बाट मन माहीं। खोलि कपाट महल मों जाहीं॥ रही लटापटि जुटि तेहि माहीं। होहि अटल तब कतहुँ न जाहीं॥ ११ ॥ ठठा ठौर दूरि ठग नियरे। नितके निठुर कीन्ह मन घेरे॥ जे ठग ठगे सब लोग सयाना। सो ठग चीन्हि ठौर पहिचाना॥ १२ ॥ डडा डर उपजे डर होई। डरही में डरराखु समोई॥ जो डर डरे डरहि फिरि आवै। डरही में फिर डरहि समावै॥ १३ ॥ ढढा हीडतहीं कित जान। हींडत ढूँढ़त जाई प्रान॥ कोटि सुमेर ढूढ़ि फिरि आवै। जेहि ढूँढ़ा सो कतहुँ न पावै॥ १४ ॥ णणा दुई बसाये गाँऊ। रेणा ढूढ़े तेरी नाँऊ॥ मूये एक जाय

तजि घना। मरे यत्यादिक केते गना ॥ १५ ॥ तता अति त्रियो नहिं जाई। तन त्रिभुवन में राखु छिपाई ॥ जो तन त्रिभुवन माहिं छिपावे। तत्वहि मिली तत्व सो पावे ॥ १६ ॥ थथा अति अथाह थाहो नहिं जाई। ई थिर ऊ थिर नाहिं रहाई ॥ थोरे थोरे थिर होउ भाई। बिन थंभे जस मंदिर थँभाई ॥ १७ ॥ ददा देखहु बिनसन हारा। जस देखहु तस करहु विचारा ॥ दशहु द्वारे तारी लावै तब दयाल के दर्शन पावै ॥ १८ ॥ धधा अर्द्ध माँहि अँधियारी। अर्द्ध छोड़ि ऊर्ध मन तारी ॥ अर्ध छोड़ि ऊर्ध मन लावै। आपा मेटिके प्रेम बढ़ावै ॥ १९ ॥ नना वो चौथे महँ जाई। रामका गदहा होय खर खाई ॥ आपा छोड़ो नरक बसेरा। अजहुँ मूढ़ चित्त चेत सकेरा ॥ २० ॥ पपा पाप करें सब कोई। पाप के करे धर्म नहिं होई॥ पपा कहे सुनहु रे भाई। हमरे से इन किछुवो न पाई ॥ २१ ॥ फफा फल लागे बड़ दूरी। चाखे सतगुरु देइ न

तूरी ॥ फफा कह सुनहु रे भाई । स्वर्ग पताल की खबरि न पाई ॥ २२ ॥ बबा वर वर करें सब कोई। वर वर करे काज नहिं होई ॥ बबा बात कहें अर्थाई फल का मर्म न जानहु भाई ॥ २३ ॥ भभा भभरि रहा भरपूरी । भभरे ते है नियरे दूरी ॥ भभा कहे सुनहु रे भाई । भभरे आवे भभरे जाई ॥ २४ ॥ ममा के सेये मर्म नहिं पाई । हमरे से इन मूल गमाई ॥ माया मोह रहा जग पूरी । माया मोहहि लखहु विचारी ॥ २५ ॥ यया जगत रहा भरपूरी । जगतहु ते है जाना दूरी ॥ यया कहे सुनहु रे भाई । हमहीं ते इन जेजै पाई ॥ २६ ॥ ररा रारि रहा अरुझाई । राम कहे दुख दरिद्र जाई ॥ ररा कहे सुनहु रे भाई । सतगुरु पूछिके सेवहु आई ॥२७॥ लला तुतुरे बात जनाई । तुतुरे आय तुतुरे परचाई॥ आप तुतुरे और को कहई । एकै खेत दूनों निर्वहई ॥ २८ ॥ ववा वह वह कहें सब कोई । वह वह कहें काज नहीं होई ॥ वह तो कहे सुने जो कोई।

स्वर्ग पताल न देखे जोई ॥ २६ ॥ शशा सर नहिं देखे कोई। सर शीतलता एकै होई ॥ शशा कहे सुनहुरे भाई। शून्यसमान चला जग जाई ॥३०॥ पषा खर खर करैं सब कोई। खर खर करे काज नहिं होई ॥ पषा कहे सुनहु रे भाई। राम नाम लेजाहु पराई ॥१३॥ ससा सरा रचो बरियाई। सर बेधे सब लोग तवाई ॥ ससा के घर शूनगुण होई। इननी बात न जाने कोई ॥ ३२ ॥ हहा हाय हायमें सब जग जाई। हर्ष सोग सब मॉहि समाई ॥ हँकरि हँकरि सब बड़बड़ गयऊ। हहा मर्म न काहू पयऊ॥३२॥ चछा छिनमें परलय सब मिटि जाई। छेव परे तब को समुझाई ॥ छेव परे काहु अंत न पाया कहहिं कबीर अगमन गोहराया ॥ ३४ ॥

अथ विप्र मतीसी।

विप्र मतीसी ॥ १ ॥

सुनहु सवन मिलि विप्र मनीसी। हरि बिन बूड़ी नाव भरीसी ॥ ब्राह्मण होयके ब्रह्म न जानें।

घरमा यज्ञ प्रतिग्रह आनें ॥ जेहि सिरजा तिहि नहिं पहिचाने । कर्म धर्म मति बैठ वखाने ॥ ग्रहन अमावस और दुईजा । शांति पांति प्रयोजन पूजा ॥ प्रेत कनक मुख अंतर वासा । आहुति सत्य होम की आसा ॥ कुल उत्तम जग मांहि कहावै । फिर२ मध्यम कर्म करावै ॥ सुत दारा मिलि जूठो खाई । हरिभक्ता की छूति लगाई ॥ कर्म अशौच उछिष्ट खाई । मतिभ्रष्ट यमलोक सिधाई ॥ नहाय खोरि उत्तम ह्वै आये । विष्णुभक्त देखे दुख पाये। स्वारथ लागि रहे बेकाजा। नाम लेत पावक जिमि डाजा॥ रामकृष्ण की छोड़िनि आसा । पढ़ि गुनि भये कृतमके दासा ॥ कर्म पढ़ै औ कर्मको धावै । जेहि पूछा तेहि कर्म दृढ़ावै ॥ निःकर्मी की निंदा कीजै । कर्म करें ताही चित दीजै ॥ भक्ति भगवंतकी हृदया लावें । हिरणांकुशको पंथ चलावें ॥ देखहु सुमति केर परकासा । विन अभ्यंतर भये कृतमके दासा ॥ जाके पूजे पाप न ऊडे। नाम-स्मरणी भवमा बूड़े ॥

पाप पुण्यके हाथहि पासा । मारि जगतका कीन्ह विनासा ॥ ई बहनी कुल बहनि कहावें । ई ग्रह जोरे उग्रह मारे ॥ बैठे ते घर साहु कहावें । भीतर भेद मनमुपहि लगावे ॥ ऐसी विधि सुर विप्र भनीजे । नाम लेत पीचासन दीजे ॥ बूड़ि गये नहिं आपु सँभारा । ऊँच नीच कहु काहि जो हारा ॥ ऊँच नीच है मध्य की बानी । एकै पवन एकहै पानी ॥ एकै मटिया एक कुम्हारा । एक सबनका सिरजन हारा ॥ एक चाक सब चित्र बनाई । नाद बिंदके मध्य समाई ॥ व्यापक एक सकलकी ज्योती । नाम धरेका कहिये भौती ॥ राचस करनी देव कहावें । वादकरें गोपाल न भावें ॥ हंस देह तजि न्यारा होई । ताकर जाति कहै धौं, कोई ॥ स्याह सफेद कि राता पियरा । अबरण बरण कि ताता सियरा ॥ हिंदू तुरुक कि बूढ़ो बारा । नारि पुरुष का करहु बिचारा ॥ कहिए कांहि कहा नहिं मानर । दास कबीर सोई पै जाना ।

साखी—वहा है वहि जात है। कर गहे चहुँ ओर ॥
जो कहा नहिं माने। दे धका दुइ और ॥ १ ॥

॥ कहरा ॥

॥ कहरा ॥ १ ॥

सहज ध्यान रहु सहज ध्यान रहु। गुरुके वचन समाई हो ॥ मेली सृष्टि चराचित राखहु। रहु दृष्टि लौलाई हो ॥ जस दुख देखि रहहु यहि औसर। अस सुख होई हैं पाये हो ॥ जो खुटकार बेगि नहिं लागे। हृदय निवारहु कोहू हो ॥ मुक्तिकी डोरि गाढ़ि जनि खैंचहु। तब बझिहैं बड़ रोहू हो ॥ मनुवहि कहहु रहहु मन्न मारे। खिजुवा खीजि न बोले हो ॥ मानु मीत मितैवो न छोड़े। कमऊँ गाँठि न खोले हो ॥ भोगउ भोग भुक्ति जनि भूलहु। योग युक्ति तन साधहु हो ॥ जो यह भाँति करहु मतवलिया। तामतको चित बाधहु हो। नहिं तो ठाकुर है अति दारुण। करि हैं चाल कुचाली हो ॥ बांधि मारि डंड सब लेहैं। छूटहिं तब मतवाली हो ॥ जब-

हीं सामत आनि पहूँचे । पीठ सांटि भल टुटिहैं हो ॥ ठाढ़े लोग कुटुँम सब देखें । कहे काहु के न छुटिहैं हो । एकतो निहुरि पांवपरि विनवे । विनती किये नहिं माने हो ॥ अनचीन्हे रहेहु न कियेहु चिन्हारी सो कैसे पहिचनवेउहो ॥ लीन्ह बुलाय बात नहिं पूछे । केवट गर्भ तन बोले हो ॥ जाकी गांठि समर कछु नाहीं । सो निर्धनिया ह्वै डोलेहो ॥ जिन्ह सम युक्ति अगमन के राखिन । धरिन मच्छ भरि डेहरि हो ॥ जेकर हाथ पांव कछु नाहीं । धरन लाग तेहि सो हरिहो ॥ पलना अछत पेलि चलु बौरे । तीर तीरका टोवहु हो ॥ उथले रहहु परहु जनि गहिरे । मति हाथहु की खावहु हो ॥ तरके घाम उपरके भुंभुरी । छाँह कतहुँ नहिं पायहु हो । ऐसेनि जानि पसीझहु सीझहु । कस न छतुरिया छायहु हो ॥ जो कछु खेड़ कियहु सो कीयेहु । बहुरि खेड कस होइ हो ॥ सासु नँनद दोऊ देत उलादन । रहहु लाज मुख गोई हो ॥ गुरु भौ ढील गोनी

भई लचपच। कहा न मानेहु मोरा हो ॥ ताजी तुर्की कबहुँ न साधेहु। चढ़ेहु काठ के घोराहो॥ ताल झांझ भल बाजत आवे। कहरा सब कोइ नाचे हो॥ जेहि रंग दुलहा व्याहन आये। दुलहिनि तेहि रंग राचे हो॥ नौका अछत खेवै नहिं जानेहु। कैसेक लगवेहु तीरा हो। कहँहि कबीर राम रस माते। जोलहा दास कबीरा हो॥ १॥

कहरा ॥ २ ॥

मत सुनु मानिक मत सुनु मानिक। हृदया बंद निवारहु हो॥ अटपट कुम्हरा करे कुम्हरैया। चमरा गांव न बांचे हो॥ नित उठि कोरिया पेट भरतु है। छिपिया आंगन नाचे हो॥ नित उठि नौवा नाव चढ़तु है। वेरहि वेरा बोरे हो॥ राउर की कछु खबरि न जानहु। कैसे के झगरा निवरहु हो॥ एक गांव में पांच तरुनि बसें। जेहिमा जेठ जेठानी हो॥ आपन आपन झगरा प्रकासिनि। पियासो प्रीति नसाइनि हो॥ ऐसिन माहिं रहत

नित बकुला । तिकुला ताकि न लीन्हा हो ॥ गाइन मांहिं बसेउ नहिं कबहूँ । कैसे के पद पहिचनवेउ हो ॥ पंथी पंथ बूझ नहिं लीन्हा ॥ मूढहिं मूढ गँवारा हो॥ घाट छोड़ि कस औघट रेंगहु। कैसे के लगबेहु तीरा हो ॥ जतइत के धन हेरिन ललचिन कोदइत के मनदौरा हो ॥ दुइ चकरी जनि दरर पसारहु। तब पैहो ठीक ठैरा हो ॥ प्रेम बाण एक सत गुरु दीन्हो। गाढ़ों तीर कमाना हो ॥ दास कबीर कीन्ह यह कहरा । महरा मांहि समाना हो ॥ २ ॥

कहरा ॥ ३ ॥

राम नाम को सेवहु बीरा । दूरि नाहिं दुरि आसा हो ॥ और देव का सवहु बौरे। ई सब झूठी आसा हो ॥ ऊपर उजर कहा भौ बौरे। भीतर अजहूँ कारो हो ॥ तनके वृद्ध कहा भौ बौरे । मनुवा अजहूँ बारो हो॥ मुखके दांत गये कहां बौरे। भीतर दांत लोहेके हो ॥ फिर २ चना चबाव विषय के।

काम क्रोध मद लोभ के हो॥ तनकी सकल संग्या घटि गयऊ। मनहिं दिलासा दूनी हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो। सकल सयानप ऊनी हो॥

कहरा ॥ ४ ॥

ओढन मोरा राम नाम। मैं रामहिं का बनिजारा हो॥ राम नाम का करहु बनिजिया। हरि मोरा हटवाइ हो॥ सहस नामका करो पसारा। दिनदिन होत सवाई हो॥ जाके देव वेद पछ राखा । ताके होत हटवाई हो॥ कानि तराजू सेर तीनि पउवा। तुकनि दोल वजाइ हो॥ सेर पसेरी पूरा कैले। पासंग कतहुँ न जाई हो॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो। जोर चला ज़हडाई हो॥ ४॥

कहरा ॥ ५ ॥

राम नाम भजु राम नाम भजु । चेति देखु मन माहीं हो। लच्छ करोरी जोरि धन गाड़े। चलत डोलावत वांहीं हो॥ दादा बाबा औ प्रपाजा। जिन्हके यह भुइँ भाँड़े हो ॥ आँधर भये हियहु

की फूटी । तिन्ह काहे सब छाँड़े हो ॥ ई संसार असार को धंधा । अन्त काल कोइ नाहीं हो ॥ उपजत बिनसत वार न लागे। ज्यों बादर की छांहीं हो ॥ नाता गोता कुल कुटुंब सब । इन्हकर कौन बड़ाई हो ॥ कहहिं कबीर एक राम भजे बिनु। बूड़ी सब चतुराई हो ॥ ५ ॥

कहरा ॥ ६ ॥

राम नाम बिन राम नाम बिनु । मिथ्या जन्म गमायो हो ॥ सेमर सेई सुवा ज्यों जहँडे । ऊन परे पछिताई हो ॥ जैसे मदपी गाँठि अर्थ दे । घरहुकी अकिल गमाई हो ॥ स्वादे वोद्र भरे धौ कैसे । ओसै प्यास न जाई हो ॥ दर्बहीन जैसे पुरुपारथ मनही माँहिं तवाई हो ॥ गांठी रतन मर्म नहिं जाने । पारख लीन्हा छोरी हो ॥ कहहिं कबीर यह औसर बीते । रतन न मिले वहोरी हो ॥६॥

कहरा ॥ ७ ॥

रहहु सँभारे राम विचारे । कहता हौं जो

पुकारे हो ॥ मूड़ मुड़ाय फूलिके बैठें। मुद्रा पहिर मंजूसा हो ॥ तेहि ऊपर कछु छार लपेटे। भितर भितर घर मूसा हो ॥ गांव बसतु है गर्भ भारती। वाम काम हंकारा हो ॥ मोहन जहाँ तहाँ ले जइहें। नहिं पत रहल तुम्हारा हो ॥ माँझ मझरिया बसे सो जाने। जन होइहें सो थीरा हो ॥ निर्भय भये तहाँ गुरुकि नगरिया। सुख सोवें दास कबीरा हो ॥ ७ ॥

कहरा ॥ ८ ॥

खेम कुशल औ सही सलामत। कहहु कौन को दीन्हा हो ॥ आवत जात दोऊ विधि लूटे। सर्वतंग हरि लीन्हा हो ॥ सुर नर मुनि जति पीर औलिया। मीरा पैदा कीन्हा हो ॥ कहाँ लो गनों अनंत कोटि लो। सकल पयाना कीन्हा हो ॥ पानी पवन आकाश जायँगे। चंद्र जायँगे सूरा हो ॥ येभि जायँगे वोभि जायँगे। परत न काहुके पूरा हो ॥ कुशल कहत कहत जग विनसे। कुशल

काल की फाँसी हो। कहैं कबीर सारी दुनियाँ विनसे। रहे राम अविनाशी हो॥ ८॥

कहरा॥ ६॥

ऐसनि देह निरालप बौरे। मुवले छुवे न कोई हो॥ डंडवा की डोरिया तोरि लराइनि। जो कोटिन धन होई हो॥ ऊर्ध निस्वासा उपजि तरासा। हँकराइनि परिवारा हो॥ जो कोइ आवे वेगि चलावे। पल एक रहन न पाई हो॥ चंदन चीर चतुर सब लेपैं। गरे गजमुक्ता के हारा हो॥ चौंसठ गीध मुये तन लूटै। जंबुकन वोद्र बिदारा हो॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो। ज्ञान हीन मति हीना हो॥ एक एक दिना येही गति सबकी। कहा राव कहा दीना हो॥ ६॥

कहरा॥ १०॥

हौं सबहिन में हौं मैं नाहीं। मोहिं बिलग बिलगाइल हो॥ ओढ़न मोरा एक पिछौरा। लोग बोलैं एकताई हो॥ एक निरंतर अंतर नाहीं। ज्यों

अथ वसंत लिख्यते ।

वसंत (१)

जाके बारह मास वसंत होय। ताके पर मारथ बूझै बिरला कोय ॥ बरसे आगिन अखंड धार हरियर भौ बन अठारह भार ॥ पनिया आदर धरि न लोय । पौन गहे कस मलिन धोय ॥ बिनु तरिवर फूले आकाश । शिव विरंचि तहाँ लेई बास ॥ सनकादिक भूले भँवर बोय । लख चौरासी जोइनि जोय ॥ जो तोहिं सतगुरु सत्त लखाव । ताते न छूटै चरण भाव ॥ अमर लोक फललावे चाव । कहहिं कबीर बुझै सो पाव ॥ १ ॥

वसंत ॥ २ ॥

रसना पढ़ि लेहु श्री वसंत । बहुरि जाय परवेहु यमके फंद ॥ मेरु डंड पर डंक दीन्ह । अष्ट कँवल परजारि लीन्ह ॥ ब्रह्म आगिन कियो परकाश । अर्ध-उर्ध तहाँ बहे बतास ॥ नौ नारी परिमल सो गाँव । सखी पांच तहाँ देखन धाव ॥ अनहद बाजा

रहल पूरि। तहाँ पुरुष बहत्तर खेलैं धूरि॥ माया देखि कस रह्यो है भूलि। जस वनस्पति रहि है फूलि॥ कहहिं कबीर यह हरीके दास। फगुवा माँगै बैकुंठ वास॥ २॥

वसंत॥ ३॥

मैं आयो मेस्तर मिलन तोहि। रितु वसंत पहिरावहु मोहिं॥ लंबी पुरिया पाई छीन। सूत पुराना खूटा तीन॥ सर लागे तेहि तिनसै साठ। कसनि बहत्तर लागु गाँठ॥ खुरखुर खुरखुर चले नारि। बैठि जोलाहिन पल्थी मारि॥ ऊपर न चनियां करत कोड़। करिगह मा दुइ चलत गोड़॥ पांच पचीसो दशहु द्वार। सखी पाँच तहाँ रची धमार॥ रंग बिरंगी पहिरे चीर। हरिके चरण धै गावें कबीर॥ ३॥

वसंत॥ ४॥

बुढ़िया हँसि बोलिमैं नितहिं बारि। मोसे तरुनि कहो कवनि नारि॥ दांत गये मोरे पान

शशि घट जल भाँई हो ॥ एक समान कोई समुझत नाहीं । जाते जरा मरण भ्रम जाई हो ॥ रैन दिवस ये तहवाँ नाहीं । नारी पुरुष समताई हो ॥ हों में बालक बूढ़ो नाहीं । ना मोरे चिलकाई हो ॥ त्रिविधि रहों सभनि मा वरतों । नाम मोर रमुराई हो पठये न जाउँ आने नहिं आवों । सहज रहों दुनियाई हो ॥ जोलहा तान बान नहीं जाने । फाटि बिने दस ठाई हो ॥ गुरुपरताप जिन्हें जस भाख्यो । जन बिरले सो पाई हो ॥ अनंत कोटि मन हीरा बेधो । फिटकी मोल न पाई हो । सुर नर मुनिजाके खोज परे हैं । किछु किछु कबीरन पाई हो ॥१०॥

कहरा ॥ ११ ॥

ननदी गे तैं विषम सोहागिनि । तै नींद ले संसारा गे ॥ आवत देखि में एक सँग सूती । मैं औ खसम हमारा गे ॥ मोरे बाप के दुइ मेहरुवा । मैं अरु मोर जेठानी गे ॥ जब हम रहलि रसिक के जगमें । तबहि बात जग जानी गे ॥ माइ मोर

मुवलि पिता के संगे। सरा रचि मुवल संघाती गे ॥ आपुहि मुवलि और ले मुवली । लोग कुटम संग साथी गे॥जौंलौं स्वास रहे घट भीतर तौलौं कुशल परी हैं गे ॥ कहहिं कबीर जब स्वास निकर गौ । मंदिर अनल जरी है गे ॥ ११ ॥

कहरा ॥ १२ ॥

ई माया रघुनाथ की बौरी । खेलन चली अहेरा हो ॥ चतुर चिकनियां चुनि चुनि मारे । कोई न राखेउ न्यारा हो ॥ मौनी वीर दिगंबर मारे । ध्यान धरंते योगी हो ॥ जंगलमें के जंगम मारे । माया किनहुं न भोगी हो ॥ वेद पढ़ंते वेदुवा मारे । पूजा करते स्वामी हो ॥ अर्थ विचारत पंडित मारे । बांधेउ सकल लगामी हो ॥ सिंगी ऋषि बन भीतर मारे । शिर ब्रह्मा का फोरीहो ॥ नाथ मछिंदर चले पीठि दे । सिंघल हू में बोरी हो ॥ साकट के घर करता धरता । हरि भक्तन चेरी हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संता । ज्यों आवे त्यों फेरी हो ॥१२॥

खात । केस गये मोरे गंगा न्हात ॥ नैन गये मोरे कजरा देत । बैस गये पर पुरुष लेत ॥ जान पुरुषवा मोर अहार । अनजाने का करों सिंगार ॥ कहहिं कबीर बुढ़िया आनंद गाय । पूत भतारहिं बैठी खाय ।४।

वसंत ॥ ५ ॥

तुम बुझ २ पंडित कौनि नारि । काहु न व्याहलि है कुमारि ॥ सब देवन मिलि हरिहि दीन्ह ॥ चारिउ युग हरि संग लीन्ह । प्रथम पदुमिनि रूप आहि । है साँपिनि जग खेदि खाय ॥ ई बर जोबत ऊबर नाहिं । अति रे तेज त्रिय रैनि ताहि ॥ कहहिं कबीर ये जग पियारि । अपने बलकवहिं रहल मारि ।५।

वसंत ॥ ६ ॥

माई मोरे मनुसा अति सुजान । धंध कुटि कुटि करत विहान ॥ बड़े भोर उठि आंगन बाढु । बड़े खांचले गोवर काढु ॥ वासी भात मनुसे लिहल खाय । बड़ा घैल लिये पानी को जाय ॥ अपने सैयां की मैं बांधूँगी पाट । ले बेचूँगी हाटो हाट ॥

कहहिं कबीर ये हरि के काज। जोइ याके ढिग रहि कौनि लाज॥

वसंत॥ ७॥

घरहि में बाबू बाढ़लि रार। उठि उठि लागलि चपल नारि॥ एक बड़ी जाके पाँच हाथ। पाँचों के पचीस साथ॥ पचीस बतावें और और। और बतावे कईक ठौर॥ अंतर मध्ये अंत लेइ। झकझोरि झोरा जिवहि देइ॥ आपन आपन चाहें भोग। कहु कैसे कुशल परि है जोग॥ बिबेक बिचार न करे कोय। सब खलक तमासा देखे लोय॥ मुख फारि हँसे राव रंक। ताते धरे न पावे एको अंक॥ नियरे न खोजै बतावे दूरि। चहुँदिश बागुलि रहलि पूरि॥ लच्छ अहेरी एक जीव। ताते पुकारै पीव पीव॥ अबकी बार जो होय चुकाव। कहहिं कबीर ताकी पूरि दाव॥ ७॥

वसंत॥ ८॥

कर पल्लव के बल खेले नारि। पंडित होय

सो लेइ विचारि ॥ कपरा न पहिरे रहै उघारि। निर्जिव से धनि अति पियारि॥ उलटि पलटि बाजु तार। काहू मारे काहु उबार॥ कहैं कबीर दासन के दास। काहू सुख दे काहु निरास ॥ ८॥

बसंत ॥ ९ ॥

ऐसो दुर्लभ जात शरीर॥ राम नाम भजु लागु तीर॥ गये बेनु बलि गये कंस। दुर्योधन को बूड़ो वंस ॥ पृथु गये पृथ्वी के राव। त्रिविक्रम गये रहे न काव॥ छौ चकवे मंडली के झारि। अजहुँ हो नर देखु विचारि ॥ हनुमत कस्यप जनक बालि। ई सब छेकल यमके द्वारि॥ गोपीचंद भल कीन्ह योग। जस रावण मारयो करत भोग। ऐसी जात देखि नर सबहिं जान। कहहिं कबीर भजु राम नाम ॥ ९ ॥

बसंत ॥ १० ॥

सबही मतमाते कोई न जाग। संगहिं चोर घर मूसन लाग॥ योगी माते योगध्यान। पंडित

माते पढ़ि पुरान ॥ तपसी माते तप के भेव। संन्यासी माते करि हंमेव ॥ मोलना माते पढि मुसाफ। काजी माने दै निसाफ ॥ संसारी माते माया के धार। राजा माने करि हँकार ॥ माते शुकदेव उद्धव अक्रूर। हनुमन माते ले लंगूर ॥ शिव माते हरि चरण सेव। कलि माते नामा जैदेव ॥ सत्य सत्य कहे सुम्रति वेद। जस रावण मारेउ घर के भेद ॥ चंचल मनके अधम काम। कहहिं कवीर भजु राम नाम ॥ १० ॥

वसंत ॥ ११ ॥

शिवकासी कैसी भई तुम्हारि। अजहुँ हो शिव लेहु विचारि ॥ चोवाचंदन अगर पान। घर घर सुम्रति होय पुरान ॥ वहु विधि भवने लागु भोग। ऐसो नग्र कोलाहल करत लोग ॥ वहु विधि परजा लोग तोर। तेहि कारण चित धीठ मोर ॥ हमरे वलकवा के इहै ज्ञान। तोहरा को समुझावे आन ॥ जो जेहि मनसे रहल आय। जीवका मरण

कहु कहाँ समाय ॥ ताकर जो कछु होय अकाज । ताहि दोप नहिं साहेब लाज ॥ हर हर्पित सो कहल भेव । जहाँ हम तहाँ दुसरा न केव ॥ दिना चार मन धरहु धीर । जस देखहिं तस कहहिं कबीर ११

बसंत ॥ १२ ॥

हमरे कहलक नहिं पतियार ॥ आप बूड़े नर सलिल धार ॥ अंधा कहै अंधा पतियाय । जस बिस्वा के लगन धराय ॥ सो तो कहिये ऐसो अबूझ । खसम ठाढ़ ढिग नाहिं सूझ ॥ आपन आपन चाहैं मान । झूठ प्रपंच साँच करि जान ॥ झूठा कबहुँ न करिहैं काज । हौं बरजों तोहि सुनु निलाज ॥ छाड़हु पाँखड मानो बात । नहिं तो परबेहु यमके हाथ । कहहिं कबीर नर कियो न खोज भटकि मुवा जस बन के रोझ ॥ २२ ॥

—❀❀❀❀—

अथ चाचर लिख्यते ।

चाचर ॥ १ ॥

खेलति माया मोहनी। जिन्ह जेर कियो संसार। कटि केहरि गजगामिनी । संशय कियो शृंगार ॥ रचेउ रंगते चूनरी । कोइ सुंदरि पहिरै आय ॥ शोभा अदबुद रूप वाकी । महिमा वरनि न जाय ॥ चन्द्रवदनि मृगलोचनी माया । बुंदका दियो उघार ॥ जती सती सब मोहिया । गज गति ऐसी जाकी चाल ॥ नारद को मुख मांडिके । लीन्हों वसन छोड़ाय ॥ गर्भ गहेली गर्भ ते । उल्टी चली मुसकाय ॥ शिवसन ब्रह्मा दौरिके । दूनों पकरो धाय ॥ फगुवा लीन्ह छुड़ाय के । वहुरि दियो छिटकाय ॥ अनहद धुनि बाजा बजै । श्रवन सुनत भौ चाव ॥ खेलन हारा खेलि है । जैसी वाकी दाव ॥ अज्ञान ढाल आगे दियो । टरि टरे न पाँव । खेलनहारा खेलिहै । वहुरि न वाकी दाव ॥ सुन नर मुनि औ देवता । गोरख दत्त और व्यास ॥

सनक सनंदन हारिया । और की केतिक आश ॥ छिलकत थेथे प्रेम सों । मोर पिचकारी गात ॥ कै लीन्हों वसि आपने फिर २ चितवत जात । ज्ञान डांगले रोपिया । त्रिगुण दियो है साथ ॥ शिवसन ब्रह्मा लेन कहो है । और की केतिक बात ॥ एक ओर सुर नर मुनि ठढ़े ॥ एक अकेली आप । दृष्टि परे उन काहु न छोड़े । कै लीन्हा एक थाप ॥ जेते थे तेते लिये । घूँघट माहिं समोय ॥ कज्जल वाकी रेख है । अदग गया नहिं कोय ॥ इंद्र कृष्ण द्वार खड़े । लोचन ललाचि लजाय । कहहिं कबीर ते ऊबरे । जाहि न मोह समाय ॥ १ ॥

चाचर ॥ २ ॥

जारो जग का नेहरा । मन बौरा हो ॥
जामें सोग संताप समुझि मन बौरा हो ॥
तन धन से क्या गर्भसि मन बौरा हो ॥
भस्म कीन्ह जाके साज समुझि मन बौरा हो ॥
बिना नेवका देवघरा मन बौरा हो ॥

बिन कहगिल की ईंट समुझि मन बौरा हो ॥
काल बूत की हस्तिनी मन बौरा हो ॥
चित्र रचो जगदीस समुझि मन बौरा हो ॥
काम अंध गज वशि परे मन बौरा हो ॥
अंकुश सहियो शीश समुझि मन बौरा हो ॥
मर्कट मूठी स्वाद की मन बौरा हो ॥
लीन्हों भुजा पसारि समुझि मन बौरा हो ॥
छूटन की संशय परी मन बौरा हो ॥
घर घर नाचेउ द्वार समुझि मन बौरा हो ॥
ऊंच नीच समझेउ नहीं मन बौरा हो ॥
घर घर खायेउ डांग समुझि मन बौरा हो ॥
ज्यों सुवना नलनी गह्यो मन बौरा हो ॥
ऐसो भरम विचार समुझि मन बौरा हो ॥
पढ़ गुने क्या कीजिये मन बौरा हो ॥
अंत बिलैया खाय समुझि मन बौरा हो ॥
सूने घरका पाहुना मन बौरा हो ॥
ज्यों आवे त्यों जाय समुझि मन बौरा हो ॥

नहाने को तीरथ घना मन बौरा हो ॥
पूजवे को बहु देव समुझि मन बौरा हो ॥
बिनु पानी नर बूड़हिं मन बौरा हो ॥
तुम टेकेउ राम जहाज समुझि मन बौरा हो ॥
कहहिं कबीर जग भर्मिया मन बौरा हो ॥
तुम छाडहु हरिकी सेवा समुझि मन बौरा हो ॥

वेलि ।

वेलि ॥ १ ॥

हंसा सरवर शरीर में हो रमैया राम ॥
जागत चोर घर मूसहिं हो रमैया राम ॥
जो जागल सो भागल हो रमैया राम ॥
सोवत गैल बियोग हो रमैया राम ॥
आजु बसेरा नियरे हो रमैया राम ॥
काल बसेरा बड़ि दूर हो रमैया राम ॥
जइहो बिरांने देश हो रमैया राम ॥
नैन भरोगे धूरि हो रमैया राम ॥
त्रासमथन दधिमथन कियो हो रमैया राम ॥

भवन मथेउ भरपूरि हो रमैया राम ॥
फिरिकै हन्सा पाहुन भये हो रमैया राम ॥
बेधिन पद निर्वान हो रमैया राम ॥
तुम हँसा मन मानिक हो रमैया राम ॥
हटलो न मानेहु मोर हो रमैया राम ॥
जसरे कियेहु तस पायेउ हो रमैया राम ॥
हमरे दोप का देहु हो रमैया राम ॥
अगम काटि गम कियेहु हो रमैया राम ॥
सहज कियेहु विश्वास हो रमैया राम ॥
रामनाम धन बनिज कियो हो रमैया राम ॥
लादेउ वस्तु अमोल हो रमैया राम ॥
पांच लदनुवां लादि चले हो रमैया राम ॥
नौ बहियां दश गोनि हो रमैया राम ॥
पांच लदनुवां खागि परे हो रमैया राम ॥
खाखर डारिनि फोरि हो रमैया राम ॥
शिर धुनि हँसा उड़िचले हो रमैया राम ॥
सरवर मति जो हारि हो रमैया राम ॥

आगि जो लागी सरवरमें हो रमैया राम ॥
सरवर जरि भौ धूरि हो रमैया राम ॥
कहहिं कबीर सुनो संतो हो रमैया राम ॥
परखि लेहु खरा खोट हो रमैया राम ॥

बेली ॥ २ ॥

भल सुमृति जहँडायेउ हो रमैया राम ॥
धोखे कियेउ विश्वास हो रमैया राम ॥
सोतो हैं बन्सी कसि हो रमैया राम ॥
सेरे कियहु विश्वास हो रमैया राम ॥
ईतो है वेद शास्त्र हो रमैया राम ॥
गुरु दिहल मोहि थापि हो रमैया राम ॥
गोबर कोट उठायहु हो रमैया राम ॥
परि हरि जैबेहु खेत हो रमैया राम ॥
मन बुद्धि जहवां न पहुँचे हो रमैया राम ॥
तहाँ खोज कैसे होय हो रमैया राम ॥
यह सुनके मन धीरज धरहु हो रमैया राम ॥
मन बढि रहल लजाय हो रमैया राम ॥

फिर पाछे जनि हेरहु हो रमैया राम ॥
कालबूत सब आहि हो रमैया राम ॥
कहहिं कबीर सुनो संतो हो रमैया राम ॥
मन बुद्धि ढिग फैलावहु हो रमैया राम ॥

बिरहुली ।

बिरहुली ॥ १ ॥

आदि अंत नहिं होत बिरहुली ॥
नहिं जर पल्लव डार बिरहुली ॥
निशि बासर नहिं होते बिरहुली ॥
पौन पानी नहिं मूल बिरहुली ॥
ब्रह्मादिक सनकादि बिरहुली ॥
कथि गये योग अपार बिरहुली ॥
मास असाढ़े शीतल बिरहुली ॥
बोइनि सातो बीज बिरहुली ॥
नित गोड़े नित सींचे बिरहुली ॥
नित नव पल्लव डार बिरहुली ॥

छिछिलि बिरहुली छिछिली बिरहुली ॥
छिछिली रहल तिहुँलोक बिरहुली ॥
फूल एक भल फूलल बिरहुली ॥
फूलि रहल संसार बिरहुली ॥
सो फुल लोढ़ें संत जना बिरहुली ॥
बंदि के राउर जाय बिरहुली ॥
सो फल बंदे भक्त जना बिरहुली ॥
डँसि गौ बैतल साँप बिरहुली ॥
बिपहर मंत्र न माने बिरहुली ॥
गारुड बोले अपार बिरहुली ॥
बिपकी क्यारी बोयहु बिरहुली ॥
(अब) लोढ़त का पछिताहु बिरहुली ॥
जन्म जन्म यम अंतरे बिरहुली ॥
फल एक कनयर डार बिरहुली ॥
कहँहि कबीर सँचपाव बिरहुली ॥
जो फल चाखहु मोर बिरहुली ॥

—❀❀❀—

हिंडोला ।

हिंडोला ॥ १ ॥

भरम हिंडोला झूलै सब जग आय ॥
पाप पुण्य के खंभा दोऊ । मेरु माया माँहि ॥
लोभ भँवरा विषय मरुवा । काम कीला ठानि ॥
शुभ अशुभ बनाये डांडी । गहे दूनों पानि ॥
कर्म पटरिया बैठिके । को को न भूले आनि ॥
झूलत गण गंधर्व मुनिवर । झूलत सुरपति इंद्र ॥
झूलत नारद शारदा । झूलत व्यास फणिंद्र ॥
झूलत विरंचि महेश शुक मुनि । झूलत सूरज चंद्र ॥
आप निर्गुण सगुण होय । झूलिया गोविन्द ॥
छौ चारि चौदह सात एकइस । तीनिउ लोक बनाय ॥
खानी बानी खोजि देखहु । स्थिर कोई न रहाय ॥
खंड ब्रह्मांड खोजि देखहु । छुटत कितहु नाहिं ॥
साधु संगति खोजि देखहु । जीव निस्तरि कित जाहिं ॥
शशि सूर रैनि शारदी । तहां तत्व पल्लव नाहिं ॥
काल अकाल परलय नहीं । तहां संत बिरले जाहिं ॥

तहां के बिछुरे बहु कल्प बीते । भूमि परे भुलाय ॥
साधु संगति खोजि देखहु । बहुरि उलटि समाय ॥
ये झुलवे को भय नहीं । जो होय संत सुजान ॥
कहहिं कबीर सतसुकृत मिले तो । बहुरि न झूलै आन १

हिंडोला ॥ २ ॥

बहुविधि चित्र बनायके । हरि रचिन क्रीडा रास ॥
जाहि न इच्छा झूलवेकी । ऐसी बुद्धि केहि पास ॥
झूलत झूलत बहु कल्प बीते । मन नहिं छाड़े आस ॥
रच्यो रहस हिंडोरवा । निशि चारि युग चौमास ॥
कबहुँ ऊँचे कबहुँक नीचे । स्वर्ग भूमि लै जाय ॥
अति भरमित भरम हिंडोलवा । नेकु नहीं ठहराय ॥
डरपत हौं यह झूलवे को । राखु जादव राय ॥
कहै कबीर गोपाल बिनती । शरण हरि तुम आय॥२॥

हिंडोला ॥ ३ ॥

लोभ मोहके खंभा दोऊ । मनसे रच्यो हिंडोर ॥
झूलहिं जीव जहाँलगि । कितहुँ न देखों थितठौर ॥
चतुर झूलहिं चतुराइया । झूलहिं राजा शेष ॥

चांद सूर्य दोउ भूलहीं । उनहुँन आज्ञा भेष ॥
लख चौरासी जीव भूलही । रवि सुतधरिया ध्यान ॥
कोटि कल्प युग बीतिया । अजहुँ न माने हारि ॥
धरती अकाश दोउ भूलही भूलही पौना नीर ॥
देह धरे हरि भूलही (ठाढ़े) देखहि हंस कबीर ॥३॥

साखी ।

जहिया जन्म मुक्ता हता । तहिया हता न कोय ॥
छठी तुम्हारी हौं जगा । तू कहाँ चली बिगोय ॥१॥
शब्द हमारा तू शब्दका । सुनि मति जाहु सरक ॥
जो चाहो निज तत्वको तो शब्दहि लेहु परख ॥२॥
शब्द हमारा आदिका । शब्दै पैठा जीव ॥
फूल रहनि की टोकरी । घोरै खाया घीव ॥ ३ ॥
शब्द बिना सुरति आँधरी । कहो कहाँ को जाय ॥
द्वार न पावै शब्द को । फिर फिर भटका खाय ॥४॥
शब्द शब्द बहु अंतरे । सार शब्द मंथि लीजै ॥
कहहिं कबीर जहां सारशब्दनहिं। धृगजीवनसो जीजै५
शब्दै मारा गिर परा । शब्दै छोड़ा राज ॥

जिन्ह जिन्ह शब्द विवेकिया। तिनका सरिगो काज ६
शब्द हमारा आदि का। पल पल करहूँ याद॥
अंत फलेगी मांहली। ऊपर की सब बाद॥ ७॥
जिन्ह जिन्ह सम्मलना किया। अस पुर पाटन पाय॥
झालि परे दिन आथये। सम्मल कियो न जाय॥८॥
यहाई सम्मल करिले। आगे विपई बाट॥
स्वर्ग बिसाहन सब चले। जहाँ बनियाँ ना हाट॥९॥
जो जानहु जीव आपना। करहु जीव को सार॥
जियरा ऐसा पाहुना। मिले न दूजी बार॥ १०॥
जो जानहु जग जीवना। जो जानहु सो जीव॥
पानि पचावहु आपना। पानी माँगि न पीव ११
पानि पियावत क्या फिरो। घर घर सायर बारि॥
तृषावन्त जो होयगा। पीवेगा झखमारि॥ १२॥
हंसा मोती बिकानिया। कंचन थार भराय॥
जो जाको मर्म न जाने। ताको काह कराय॥१३॥
हंसा तू सुवर्ण वर्ण। का वर्णों मैं तोहि॥
तरिवर पाय पहेलि हो। तबै सराहों तोहि॥ १४॥

हंसा तूतो सबल था । हलुकी अपनी चाल ॥
रंग कुरंगे रंगिया । किया और लगवार ॥१५॥
हंसा सरवर तजि चले । देहे परिगौ सून ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । तेहि दर तेही थून ॥१६॥
हंस बकु देखा एक रंग । चरें हरियरे ताल ॥
हंस चीर ते जानिये । बकुहि घेरंगे काल ॥ १७ ॥
काहे हरनी दूबरी । येही हरियरे ताल ॥
लच अहेरी एक मृग । केतिक टारों भाल ॥ १८ ॥
तीन लोक भौ पींजरा । पाप पुन्य भौ जाल ॥
सकल जीव सावज भये । एक अहेरी काल ॥१६॥
लोभे जन्म गँवाइया । पापै खाया पून ॥
साधी सो आधी कहैं । तापर मेरा खून ॥ २० ॥
आधी साखी शिर खड़ी । जो निरुवारी जाय ॥
क्या पंडित की पोथिया । रात दिवस मिलि गाय॥२१॥
पांच तत्त्वका पूतरा । युक्ति रचीं मैं कीव ॥
मैं तोहि पूछौं पंडिता । शब्द बड़ा की जीव ॥२२॥
पांच तत्व का पूतरा । मानुष धरिया नांव ॥

एक कलाके बीछुरे । निकल होत सब ठांव ॥ २३ ॥
रंगहिते रँग ऊपजे । सब रँग देखा एक ॥
कौन रंग है जीविका । ताकर करहु विवेक ॥२४॥
जाग्रत रूपी जीव है । शब्द सोहागा सेत ॥
जर्द बुंद जलकुकुही । कहहिं कबीर कोई देख॥२५॥
पांचतत्वलेयातनकीन्हा । सो तन लेकाहिलेदीन्हा ॥
कर्महिकेवशजीवकहतहै। कर्महि को जीव दीन्हा॥२६॥
पांच तत्व के भीतरे । गुप्त वस्तु अस्थान ॥
विरला मर्म कोई पाइहें। गुरु के शब्द प्रमान॥२७॥
असुन्न तखत अडि आसना । पिंड झरोखे नूर ॥
जाके दिलमें हौं बसों । सेना लिये हजूर ॥ २८ ॥
हृदया भीतर आरसी । मुख देखा नहिं जाय ॥
मुख तो तबही देखिहो । जब दिलकी दुबिधा जाय२९॥
गांव ऊंचे पहाड़ पर । औ मोटा की बाँह ॥
कबीर अस ठाकुर सेइये । उबरिये जाकी छांह॥३०॥
जेहि मारग गये पंडिता । तेई गई बहीर ॥
ऊंची घाटी रामकी । तेहि चढ़ि रहे कबीर ॥ ३१ ॥

ये कबीर तैं उतरि रहु । तेरो सम्मल परोहन साथ ॥
सम्मल घटे न पगु थके । जीव बिराने हाथ ॥२२॥
कबीर का घर शिखर पर । जहाँ सिलहली गैल ॥
पाँव न टिकै पिपीलको । तहाँ खलक न लादे बैल ॥२३॥
बिन देखे वह देश के । बात कहे सो कूर ॥
आपुहि खारी खात है । बेंचत फिरै कपूर ॥ २४ ॥
शब्द शब्द सब कोई कहैं । वो तो शब्द विदेह ॥
जिभ्या पर आवै नहीं । निरखि परखि करि लेह ॥२५॥
पर्बत ऊपर हर बहै । घोरा चढ़ि बसै गाँव ॥
बिना फूल भँवरा रस चाहे । कहु बिरवा को नांव ॥२६॥
चंदन बास निवारहू । तुझ कारण बन काटिया ॥
जियत जीव जनि मारहू । मूये सबै निपातिया ॥२७॥
चंदन सर्प लपेटिया । चंदन काह कराय ॥
रोम रोम विष भीनिया । अमृत कहाँ समाय ॥२८॥
ज्यों मोदाद समसान शिल । सबै रूप समसान ॥
कहहिं कबीर वह सावज कीगति तब की देखि भुकान ॥२९॥
गही टेक छोड़े नहीं । जीभ चोंच जरि जाय ॥

ऐसो तप्त अंगार है । ताहि चकोर चवाय ॥ ४० ॥
चकोर भरोसे चन्द्रके । निगले तप्त अँगार ॥
कहें कबीर डाहे नहीं । ऐसी वस्तु लगार ॥ ४१ ॥
भिलि मिलि झगरा झूलते । बाकी छूटि न काहु ॥
गोरख अटके कालपुर । कौन कहावे साहु ॥ ४२ ॥
गोरख रसिया योगके । मुए न जारी देह ॥
मास गली माटी मिली । कोरो माजी देह ॥ ४३ ॥
बनते भागि बेहडे परा । करहा अपनी बान ॥
बेदन करहा कासो कहे । को करहाको जान ॥४४॥
बहुत दिवस ते हींडिया । शून्य समाधि लगाय ॥
करहा पड़ा गाड़ में । दूरि परा पछिताय ॥ ४५ ॥
कबीर भरम न भाजिया । बहुविधि धरिया भेष ॥
साईं के परचावते । अंतर रहि गइ रेष ॥ ४६ ॥
बिनु डाँडे जग डांडिया । सोरठ परिया डाँड ॥
बाट निहारे लोभिया । गुरते मीठी खाँड ॥ ४७ ॥
मलयागिर की बासमें । वृक्ष रहा सब गोय ॥
कहने को चंदन भया । मलयागिर ना होय ॥४८॥

मलयागिर की! वासमें । बेधा ढांक पलास ॥
बे ना कबहूँ बेधिया । जुगजुंग रहिया पास ॥ ४६ ॥
चलते चलतें पगु थका । नग्र रहा नौ कोस ॥
बीचहि में डेरापरा । कहहु कौनको दोस ॥ ५० ॥
झालि परे दिन आथये । अन्तर पर गइ सांझ ॥
बहुत रसिक के लागते । विस्वा रहिगइ बांझ ॥५१॥
मन कहै कब जाइये चित्त कहै कब जांव ॥
छौ मास के हींडते । आध कोस पर गांव ॥ ५२ ॥
गृह तजिके भये उदासी । बन खंड तपको जाय ॥
चोली थाकी मारिया । बेरईचुनि चुनिखाय ॥ ५३ ॥
रामनाम जिन्ह चीन्हिया । झीना पिंजरतासु ॥
नैन न आवै नींदरी । अंग न जामै मासु ॥५४ ॥
जोजन भीजे रामरस । बिगासित कबहुँ न रूख ॥
अनुभव भाव न दरसे । ते नर सुख न दूख ॥५५॥
काटे आम न मौसरी । फाटे जुटें न कान ॥
गोरख पारस परसे बिना । कौनेको नुकसान ॥५६॥
पारस रूपी जीव है । लोह रूप संसार ॥

पारस ते पारस भया । परखभया टकसार ॥ ५७ ॥
प्रेम पाटका चोलना पहिर कबीरू नाच ॥
पानिप दीन्हो तासुको, तन मन बोले सांच ॥५८॥
दर्पण केरी गुफा में । स्वनहा पैठो धाय ॥
देखि प्रतीमा आपनी । भूँकि भूँकि मरिजाय ॥५९॥
ज्यों दर्पण प्रतिबिंब देखिये । आपु दुहुँनमा सोय ॥
यह ततसे वह तत्तहे । याही से वह होय ॥ ६० ॥
जोवन सायर मूझते । रसिया लाल कराय ॥
अब कबीर पांजी परे । पंथी आवहिं जाय ॥ ६१ ॥
दोहरा तौ नौ तन भया । पदहि न चीन्हें कोय ॥
जिन्ह यहशब्द विवेकिया । छत्रधनी है सोय ॥६२॥
कबीर जात पुकारिया । चढ़ि चंदनकी डार ॥
बाट लगाये ना लगे । पुनि का लेत हमार ॥ ६३ ॥
सब ते सांचा है भला । जो सांचा दिलहोय ॥
सांच बिना सुख नाहिंना । कोटि करै जो कोय ॥६४॥
सांच सौदा कीजिये । अपने मनमें जान ॥
सांचे हीरा पाइये । झूठे मूलहु हानि ॥ ६५ ॥

सुकृत वचन माने नहीं आपु न करे विचार ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । सपने गया संसार ॥६६॥
आगि जो लागि समुद्र मे । धुवां न परगट होय ॥
की जाने जो जरिमुवा । की जाकी लाई होय॥६७॥
लाई लावनहारकी । जाकी लाई पर जरे ॥
बलिहारी लावनहारकी । छप्पर बांचे घर जरे॥६८॥
बुन्दजो परीसमुद्र में । सो जानत सब कोय ॥
समुद्र समाना बुन्द में । जाने विरला कोय ॥६९॥
जहर जिमी दै रोपिया । अमी सींचे सौ बार ॥
कबीर खलक ना तजे । जामें जौन विचार ॥ ७० ॥
धौकी डाही लाकड़ी । ऊ भी करे पुकार ॥
अब जो जाय लोहार घर । डाहे दूजी बार ॥७१॥
विरह की ओदी लाकड़ी । सपचै औ धुंधुवाय ॥
दुखसे तबही बांचिहो । जब सकलो जरिजाय॥७२॥
विरह बाण जेहि लागिया । औपध लगे न ताहि ॥
सुसुकि २ मरिमरि जिंवै । उठे कराहि कराहि ॥७३॥
चित्तण देय समुझै नहीं । कहत भैल जुगचार॥७४॥

जो तू सांचा बाणिया । सांची हाट लगाव ॥
अंदर झारू देइके । फूरा दूरि बहाव ॥ ७५ ॥
कोठी तो है काठकी । दिगादिग दीन्ही आग ॥
पंडित जरि झोली भये । साकट उबरे भाग ॥७६॥
सावन केरा सेहरा । बूंद परी असमान ॥
सारी दुनियां वैष्णव भई । गुरु नहिं लागा कान॥७७॥
दिग-चूदा उतरा नहीं । याहि अँदेसा मोहिं ॥
सलिल मोहकी धारमें । क्या नींद आई तोहिं ॥७८॥
साखी कहे गहे नहीं । चाल चली नहिं जाय ॥
सलिल धार नदिया बहे । पांव कहां ठहराय ॥७९॥
कहंता तो बहुते मिला । गहंता मिला न कोय ॥
सो कहंता बहि जानदे । जो न गहंता होय ॥८०॥
एक एक निरुवारिये । जो निरुवारी जाय ॥
दोय मुख का बोलना । घना तमाचा खाय ॥८१॥
जिभ्याको तो बंद दे । बहु बोलन निरुवार ॥
पारखी से संग करु । गुरुमुख शब्द विचार ॥८२॥
जाके जिभ्या बंध नहीं । हृदया नाहीं सांच ॥

ताकेसंग न लागिये । घाले वंटिया मांझ ॥ ८३ ॥
प्राणी तो जिभ्या डिगा । छिन छिन बोल कुबोल ॥
मनके घाले भरमत फिरे । कालंहि देत हिंडोल॥८४॥
हिलगी भाल शरीरं में । तीर रहा है टूट ॥
चुम्बक बिना न नीकरे । कोटिपाहन गये छूट ॥८५॥
आगे सीढ़ी सांकरी । पाछे चकना चूर ॥
परदा तरकी सुन्दरी । रही धकासे दूर ॥ ८६ ॥
संसारी समय बिचारी । कोइ गृही कोइ जोग ॥
औसर मारे जात हैं । चेत बिराने लोग ॥ ८७ ॥
संशय सबजग खंडिया । संशय खंडे न कोय ॥
संशय खंडे सो जना । शब्द विवेकी होय ॥ ८८ ॥
बोलन है बहु भांतिका । नैनन किछउ न सूझ ॥
कहहिं कबीर बिचारिके । घटघट बानी बूझ ॥८६॥
मूल गहे ते काम हैं । तैं मत भरम भुलाव ॥
मन सायर मनसा लहरी । बहै कतहुँ मत जाव॥६०॥
भँवर बिलम्बे बाग में । बहु फूलन की बास ॥
(ऐसे) जीव बिलम्बे विषय में । अंतहु चले निरास६१

भँवर जाल वकु जाल हैं। बूड़े वहुत अचेत ॥
कहहिं कवीर ते बांचि हैं। जिनके हृदय विवेक॥६२॥
तीन लोक टीडी भये। उडे जो मनके साथ ॥
हरि जन हरि जाने विना। परे काल के हाथ ॥६३॥
नाना रंग तरंग है। मन मकरंद असूझ ॥
कहहिं कवीर पुकारि के। अकिल कला ले बूझ॥६४॥
वाजीगर का वांदरा। ऐसा जींव मनके साथ ॥
नाना नाच नचाय के। ले राखे अपने हाथ॥६५॥
ई मन चंचल ई मन चोर। ई मन शुद्ध ठगहार ॥
मन मन करते सुरनर मुनि। (जहँडे) मनके लत्त दुवार॥
विरह भुवंगम तन डसो। मंत्र न माने कोय ॥
राम वियोगी ना जिये। जिये तो वाउर होय ॥६७॥
राम वियोगी विकल तन। इन्ह दुखवो मति कोय ॥
छूवत ही मरि जायँगे। ताला वेली होय ॥ ६८ ॥
विरह भुवंगम पैठि के। कीन्ह करेजे घाव ॥
साधू अंग न मोरि हैं। ज्यों भावे त्यों खाव॥६९॥
करक करेजे गड़ि रही। वचन वृत्तकी फांस ॥

निकसाये निकसे नहीं । रही सो काहू गांस ॥१००
काला सर्प शरीर में । खाइनि सब जग झारि ॥
बिरले ते जन बांचि है ! रामहिं भजे बिचारि॥१०१
काल खड़ा सिर ऊपरे । जागु बिराने मीत ॥
जाका घर है गैल में । सो कस सोवे निचिंत १०२
कल काठी कालू घुना । जतन जतन घुन खाय ॥
काया मध्ये काल बसत है। मर्म न काहू पाय१०३
मन माया की कोठरी । तन संसय का कोट ॥
विषहर मंत्र माने नहीं । काल सर्प की चोट॥१०४॥
मन माया तो एक है । माया मनहिं समाय ॥
तीन लोक संशय परी । काहि कहौं समुझाय १०५
बेहा दीन्हों खेतको । बेहा खेतहिं खाय ॥
तीन लोक संशय परी । काहि कहौं समुझाय १०६
मन सायर मनसा लहरि । बूड़े बहुत अचेत ॥
कहहिं कबीर ते बाचि है । जिन हृदय विवेक १०७
सायर बुद्धि बनाय के । बाँये विचक्षण चोर ॥
सारी दुनियां जहँ डिगई । कोई न लागा ठौर १०८

मानुष ह्वै के ना मुवा । मुवा सो डाँगर ढोर ॥
एकौ जीव ठौर नहिं लागा । भयासो हाथी घोर१०९
मानुष तें बड़ पापियां । अक्षर गुरुहि न मान ॥
बार बार बन कुकुही । गर्व धरे औ ध्यान ॥११०॥
मानुष विचारा क्याकरे । कहे न खुले कपाट ॥
स्वनहा चौक बैठाइये फिर फिर ऐपन चाट ॥१११॥
मानुष विचारा क्या करे । जाके शुन्य शरीर ॥
जो जीव झांकि न उपजे तो काहपुकार कबीर११२
मानुष जन्म हि पायके । चूके अबकी घात ॥
जायपरे भवचक्र में । सहे घनेरी लात ॥११३॥
रतन ही का जतन करु । मांडीका सिंगार ॥
आया कबीर फिरा गया । झूठा है हंकार ॥११४॥
मानुष जन्म दुर्लभ है । बहुरि न दूजी बार ॥
पक्का फलजो गिरपरा । बहुरि न लागे डार॥११५॥
बांह मरोरे जात हो । मोहिं सोवत लिये जगाय ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । ईपिंड ह्वै कि जाय ११६
साखि पुरंदर ढहिं परे । विवि अक्षर युग चार ॥

रसना रंभन होत है । कोई न सके निरुवार ११७
बेडा बाँधिन सर्पका । भवसागर के माहिं ॥
जो छोड़े तो बूड़े । गहे तो डसे बाँहिं ॥ ११८ ॥
हाथ कटोरा खोवा भरा । मग जोवत दिन जाय ॥
कबीरा उतरा चित्तते । छाँछ दिया नहिं जाय ११९
एक कहो तो है नहीं । दोय कहो तो गारि ॥
है जैसा रहे तैसा । कहहिं कबीर बिचारि ॥१२०॥
अमृत केरी पूरिया । बहु बिधि दीन्ही छोरि ॥
आप सरीखा जो मिलै । ताहिं पियाऊँ घोरि ॥१२१॥
अमृत केरी मोटरी । शिर से धरी उतार ॥
जाहि कहों में एक है । मोहिं कहे दुइचार ॥१२२॥
जाके मुनिवर तप करें । वेद थके गुणगाय ॥
सोई देउँ सिखापना । कोई नहिं पतिआय ॥१२३॥
एकै ते अनंत भौ । अनंत एक है आय ॥
परिचय भइ जब एकते । अनंतो एकै माँहिं समाय ॥
एक शब्द गुरु देवका । ताका अनंत विचार ॥
थाके मुनि जन पंडिता । वेद न पावे पार १२६

राउर के पिछवारे । गावे चारिउ सेन ॥
जीव परा बहु लूट में । ना कछुलेन न देन॥१२६॥
चौगाड़ा के देखते । व्याधा भागा जाय ॥
अचरज एक देखो हो संतो । मूवा कालहि खाय १२७
तीन लोक चोरी भई । सबका सरबस लीन्ह ॥
बिना मूडका चोरवा । परा न काहू चीन्ह ॥१२८॥
चकी चलती देखिके । नैनन आया रोय ॥
दुइ पाट भीतर आयके । साबुत गया न कोय १२९
चार चोर चोरी चले । पगु पनहीं उतार ॥
चारिउ दर थूनी हनी । पंडित करहु बिचार १३०
बलिहारी वहि दूधकी । जामें निकरे घीव ॥
आधी साखि कबीरकी । चारि वेदका जीव १३१
बलिहारी तेहि पुरुषकी । परचित परखनिहार ॥
साईं दीन्ही खाँडकी । खारी बुझै गँवार ॥१३२॥
विषके बिरवे घर किया । रहा सर्प लपटाय ॥
ताते जियरहिं डरभया । जागत रैन बिहाय ॥१३३॥
जो ई घर है सर्पका । सो घर साधुन होय ।

सकल सपंदा ले गया । विषहरि लागा, सोय १३४

घुँघुची भरके वोइये । उपजा पसेरी आठ ॥
डेरा परा काल का । सांझ सकारे जात ॥१३५॥

मन भरके वोइये । घुँघुची भरि नहिं होय ॥
कहा हमार माने नहीं । अंतहु चले विगोय ॥१३६॥

आपा तजे हरि भजे । नख सिख तजै विकार ॥
सब जीव से निर्वैर रहे । साधु मता है सार ॥१३७॥

पक्षा पक्षी के कारने । सब जग रहा भुलान ॥
निर्पक्ष होयके हरि भजे । सोई संत सुजान ॥१३८॥

वड़े गये वड़ा पने । रोम रोम हंकार ॥
सतगुरु के परचै विना । चारो वरन चमार ॥१३९॥

माया तजे क्या भया । मान तजा नहिं जाय ॥
जेहि मान मुनिवर ठगे । मान सवन को खाय ।१४०।

माया के भक जग जरे । कनक कामिनी लाग ॥
कहहिं कवीर कस वाचिहो। रुई लपेटी आग ॥ १४१॥

माया जग साँपिन भई । विष लै पैठि पताल ॥
सब जग फंदे फंदिया । चले कवीरू काछ ॥१४२॥

साँप बिच्छु का मंत्र है। माहुरहु झारा जाय॥
विकट नारि के पाले परे। काढ़ि कलेजा खाय १४३
तामस केरे तीन गुण। भँवर लेइ तहाँ वास॥
एकै डारी तीनि फल। भंटा ऊख कपास॥१४४॥
मन मतंग गइयर हने। मनसा भई सचान॥
जंत्र मंत्र माने नहीं। लागी उड़ि २ खान १४५
मन गयंद माने नहीं। चलै सुरति के साथ॥
महावत विचारा क्या करे। अंकुश नहिं हाथ॥१४६॥
ई माया है चूहडी। औ चुहड़ों की जोय॥
बाप पूत अरुझाय के। संग न काहुके होय १४७
कनक कामिनी देखिके। तू मत भूल सुरंग॥
बिछुरन मिलन दुहेलरा। केंचुलि तजत भुवंग १४८
माया के वस में परे। ब्रह्मा विष्णु महेश॥
नारदशारदसनकसनंदन। गौरी और गणेश॥ १४९॥
पीपर एकजो महागंभानि। ताकरमम कोई नहिंजानि॥
डारलंबाय फल कोईन पाय। खसमअछतबहुपीपरेजाय॥
साहू से भौ चोरवा। चोरहु से भौ बूझ॥

तब जानोगे जीयरा (जब) मार परेगी तूझ ॥१५१॥
ताकी पूरी क्यों परे । गुरु न लखाई बाट ॥
ताके वेड़ा बूड़ि हैं । फिरि २ औघट घाट ॥१५२॥
जाना नहिं बूझा नहीं । समुझि कियानहिं गौन ॥
अंधेको अंधा मिला । राह बतावे कौन ॥ १५३ ॥
जाका गुरु है आँधरा । चेला काह कराय ॥
अंधे अंधा पेलिया । दोऊ कूप पराय ॥ १५४ ॥
लोगों केरि अथाइया । मति कोई पैठे धाय ॥
एकै खेत चरत हैं । बाघ गधेरा गाय ॥ १५५ ॥
चारि मास घन वर्सिया । अति अपूर सो नीर ॥
पहिरे जड़ तन बख्तरी । चुभै न एकौ तीर ॥१५६॥
गुरुकी भेली जीव डरे । काया सींचन हार ॥
कुमति कमाई बनबसे । लाग जुवाकी लार १५७
तन संशय मन सोनहा । काल अहेरी नीत ॥
एकै डांग बसेरवा । कुशल पूछो का मीत ॥१५८॥
साहुचोर चीन्हे नहीं । अंधा मति का हीन ॥
पारख बिना बिनाश है । कर बिचारहोहु भीन १५६

गुरु सिकली गर कीजिये । मनहि मस्कला दये ॥
शब्द छोलना छोलिकें । चित दर्पण करिलेय १६०
मूरख के शिखलावते । ज्ञान गाँठि का जाय ॥
कोइला होय न ऊजरा । सौमन साबुन लाय १६१
मूढ़ कर्मिया मानवा । नख सिख पाखर आहि ॥
बाहनहारा क्या करे । बान न लागे ताहि ॥१६२॥
सेमर केरा सुवना । छिवले बैठा जाय ॥
चोंच सँवारे शिर धुने । ई उसहीको भाय ॥१६३॥
सेमर सुवना वेगि तजु । घनी बिगुरचनि पांख ॥
ऐसा सेमर जो सेवे । हृदया नाहीं आंख ॥१६४॥
सेमर सुवना सेइया । दुइ ढेंढी की आस ॥
ढेंढी फूटि चनाक दे । सुवना चले निरास १६५
लोग भरोसे कौन के । बैठ रहें अरगाय,॥
ऐसेजियरहि यम लूटे । मटिया लूटे कसाय ॥१६६॥
समुझि बूझि जड़ही रहे । बल तजि निबल होय ॥
कहँहि कबीर ता संत का । पला न पकरे कोय १६७
हीरा सोइ सराहिये । सहे घनन की चोट ॥

कपट कुरंगी मानवा । परखत निकरा खोट ॥१६८॥
हरि हीरा जन जौहरी, संतन पसारी हाट ॥
जब आवै जन जौहरी । तब हीरों की साट ॥१६९॥
हीरा तहां न खोलिये । जहां कुंजरों की हाट ॥
सहजै गाँठी बाँधि के । लगिये अपनी बाट ॥१७०॥
हीरा परा बजार में । रहा छार लपटाय ॥
केतेहि मूरख पचिमुये । कोई पारिख लिया उठाय १७१
हीरोंकी ओबरी नहीं । मलया गिर नहिं पाति ॥
सिंघोंके लेहँडा नहीं । साधु न चले जमाति १७२
अपने अपने शिरोंका । सभन कीन्ह है मान ॥
हरिकी बात दुरंतरी । परी न काहू जान ॥१७३॥
हाड़ जेरे जस लाकड़ी । बार जेरे जस घास ॥
कबिरा जेरे रामरस । जस कोठी जेरे कपास १७४
घाट भुलाना बाट बिनु । भेप भुलाना कान ॥
जाकी माड़ी जगत् में । सो न परा पहिचान १७५
मूरख सो क्या बोलिये । शठ सो काह बसाय ॥
पाहन में क्या मारिये । चोखा तीर नसाय ॥१७६॥

जैसी गोली गुमजकी । नीच परी ढहराय ॥
तैसा हृदया मूर्खका । शब्द नहीं ठहराय ॥१७७॥
ऊपर की दोऊ गई । हियेहुकी गई हिराय ॥
कहहिं कबीर जाकी चारिउ गई । ताको काह उपाय ॥
केते दिन ऐसे गया । अनरूचे का नेह ॥
ऊपर बोय न ऊपजे । जो घन बरसे मेह ॥१७६॥
मै रोवों याहि जगतको । मोको रोवे न कोय ॥
मोको रोवे सो जना । जो शब्द विवेकी होय १८०
साहेब साहेब सब कहें । मोहिं अंदेशा और ॥
साहब से परचै नहीं । बैठेंगे केहिं ठौर ॥ १८१ ॥
जीव विना जीव बांचे नहीं । जीवका जीव अधार ॥
जीव दया करि पालिये । पंडित करो विचार ॥१८२॥
हम तो सबहीकी कही । मोको कोइ न जान ॥
तबभी अच्छा अबभी अच्छा । जुगजुग होउँ आन १८३
प्रगट कहो तो मारियो । परदा लखे न कोय ॥
सहना छिपा पयारतर । को केहि बैरी होय ॥१८४॥
देश विदेशे हों फिरा । मनहीं भरा सुकाल ॥

जाको ढूँढत हों फिरों । ताका परा दुकाल ॥१८५॥
कलि खोटा जग आँधरा । शब्द न माने कोय ॥
जाहि कहो हित आपना । सो उठि बैरी होय ॥१८६॥
मसि कागद छूवों नहीं । कलम गहो नहिं हाथ ॥
चारिउ जुगका महातम । मुखहिं जनाई वात १८७॥
फहम आगे फहम पीछे । फहम दहिने डेरि ॥
फहम पर जो फहम करे । सो फहमहै मेरि ॥१८८॥
हद चले सो मानवा । वेहद चले सो साध ॥
हद वेहद दोऊ तजे । ताकर मता अगाध ॥१८९॥
समुझे की गति एकहै । जिन्ह समुझा सब ठौर ॥
कहहिं कवीर ये वीचके । वलकहिं औरकी और१९०
राह विचारी क्या करे । पंथि न चले विचार ॥
अपना मारग छोडि के । फिरे उजार उजार॥१९१॥
मूवा है मरि जाहुगे । मुये की वाजी ढोल ॥
सपन सनेही जग भया । सहिदानी रहिगौबोल१९२
मूवा है मरि जाहुगे । विन शिर थोथी भाल ॥
परेहु करायल वृच्छतर । आज मरेहु की काल १९३

बोली हमारी पूर्वकी हमें लखै नहिं कोय ॥
हमको तो जोई लखे । धुर पूरब का होय ॥१६४॥
जाके चलते रौंदे परा । धरती होय बेहाल ॥
सो सावज घामें जरे । पंडित करहु बिचार ॥१६५॥
पायन पुहुमी नापते । दरिया करते फाल ॥
हाथन पर्वत तौलते । तेहि धरिखायो काल ॥१६६॥
नौमन दूध बटोरिके । टिपके किया विनाश ॥
दूध फाटि कांजी भया, हुवा घृतका नाश ॥१६७॥
केतनो मनावो पांवरि । केतनो मनावो रोय ॥
हिन्दू पूजे देवता । तुरुक न काहू होय ॥१६८॥
मानुष तेरा गुणबड़ा, मासु न आवे काज ॥
हाड़ न होते आभरन । त्वचा न बाजन बाज १६६
जोमोहिंजानेताहिमैंजानौं । लोकवेदकाकहानमानौं ॥
सबकी उत्पति धरती, सब जीवन प्रतिपाल ॥२००॥
धरती न जाने आपगुण । ऐसा गुरू बिचार ॥
धरती जानति आपगुण । कधीन होती डोल ॥
तिल तिल होती गारवी । रहति ठिकोंकी मोल२०२

जहिया कित्तम ना हता । धरती हती न नीर ॥
उत्पति परलय ना हती । तबकी कहै कबीर॥२०३॥
जहांबोलतहांअच्छरआया।जहांअच्छरतहां मनहिदढाया।
बोलअबोलएककहैजाई।जिनयहलखासोंविरलाहोई२०४
तौलों तारा जग मगे । जौलों उगे न सूर ॥
तौलों जीव कर्म बस डोले। जो लों ज्ञान न पूर२०५
नांव न जानें गाँवका । भूला मारग जाय ॥
काल गड़ेगा कांट । अगमन खसी कराय।२०६।
संगति कीजै साधु की । हरे औरकी व्याधि ॥
ओछी संगति कूरकी । आठों पहर उपाधि ।२०७।
संगति से सुख ऊपजे । कुसंगति से दुख होय ॥
कहहिं कबीर तहां जाइये। जहाँ अपनी संगति होय ॥
जैसी लागी ओर की । वैसे निवहे छोर ॥
कवड़ी कवड़ी जोरि के । पूँजी लच्छ करोर ॥२०९॥
आजु काल दिन कैक में । अस्थिर नाहिं शरीर ॥
कहहिं कबीर कस राखिहो। काँचे वासन नीर॥२१०॥
बहु बंधन से बाँधिया । एक विचारा जीव ॥

की वल छूटे आपने । कीरे छुड़ावे पीव ॥२११॥
जीव मति मारो वापुरा । सबका एकै प्राण ॥
हत्या कबहुँ न छूटि हैं । कोटिन सुना पुराण २१२
जीव घात ना कीजिये । वहुरि लेत वै कान ॥
तीरथ गयेन बांचि हो । कोटि हीरा देहुदान २१३
तीरथ गये तीनि जना । चित चंचल मन चोर ॥
एकौ पाप न काटिया । लादि निमन दशऔर२१४
तीरथ गयेते वहि मुये । जूड़े पानी नहाय ॥
कहहिंकबीरसुनोहो संतो। राक्षस ह्वै पछिताय २१५
तीरथ भई विष वेलरी । रही जुगन जुग छाय ॥
कबीरन मूल निकंदिया । कौन हलाहल खाय २१६
ये गुणवंती वेलरी । तव गुण वर्णि न जाय ॥
जर काटे ते हरियरी । सींचे ते कुम्हिलाय ।२१७।
वेलि कुढंगी फल बुरो । फुलवा कुबुधि वसाय ॥
ओ विनष्टी तूमरी । सरो पात करुवाय ।२१८।
पानी.ते अति पातला । धूवाँ ते अति झीन ॥
पौननहू ते उतावला । दोस्त कबीरन कीन्ह २१९

सतगुरुवचनसुनोहोसंतो। मति लीजै शिर भार ॥
हौं हजूर ठाढ़ कहत हौं । अब तैं समर सँभार २२०
वो करुवाई वेलरी । औरु करुवा फल तोरु ॥
सिद्ध नाम जब पाइये । वेलि विछोहा होहि २२१
सिद्ध भया तो का भया । चहुँदिशि फूटी वास ॥
अंतर वाके वीज है । फिर जामनकी आस २२२
परदे पानी ढारिया । संतो करो विचार ॥
शरमा शरमी पचि मुवा । काल घसीटिन हार २२३
अस्तिकहौंतो कोईन पतीजे । विना अस्तिका सिद्ध ॥
कहहिं कवीर सुनो हो संतो । हीरी हीरा विद्ध २२४
सोना सज्जन साधुजन । टूटि जुरे सौ वार ॥
कुजन कुंभ कुम्हार का । एकै धका दरार ॥ २२५ ॥
काजर केरी कोठरी । बुड़ता है संसार ॥
वलिहारी तेहि पुरुपकी । पैठिके निकरनहार ॥२२६॥
काजर ही की कोठरी । काजर ही का कोट ॥
तोंदी कारी ना भई । रहा सो ओटहि ओट २२७
अर्व खर्व ले दर्व है । उदय अस्त लों राज ॥

भक्ति महातम ना तुले । ई सब कौने काज २२८
मच्छ विकाने सब चले । धीमर के दरबार ॥
अँखिया तेरी रतनारी । तू क्यों पहिरा जार २२९
पानी भीतर घर किया, सेज्या किया पताल ॥
पासा परा करीमका । तब मैं पहिरा जाल ॥२३०॥
मच्छ होय नहिं बाँचिहो । धीमर तेरो काल ॥
जेहिं २ डावर तुम फिरो । तहां२मेले जाल॥२३१॥
बिन रसरी गर सकलो बंधा । तासो बंधा अलेख ॥
दीन्हा दर्पण हस्तमें । चश्म बिना क्या देख २३२
समुझाये समुझे नहीं । हथ आपु बिकाय ॥
मैं खेंचत हों आपको । चला सो यमपुर जाय २१२
नितखरसानलोहघुनछूटे, नितकी गेष्टिमायामोहटूटे॥
॥२३४॥ लोहाकेरी नावरी । पाहन घरुवा भार ॥
शिरपरविष की मोटरी । चाहै उतरन पार ॥२३५॥
कृष्ण समीपी पांडवा । गले हिंवारे जाय ॥
लोहाको पारस मिले । काहेको काई खाय ॥३६॥
पूरब उगे पश्चिम अथवे । भखे पौनके फूल ॥

ताहुको राहू ग्रसे । मानुप केहिके भूल २३७
नैनन आगे मन वसे । पलक पलक करे ठौर ॥
तीन लोक मन भूप है । मन पूजा सव ठौर ॥२३८॥
मन स्वारथी आप रस । विपय लहर फहराय ॥
मनके चलाये तन चले । जाते सरवस जाय ॥२३९॥
कैसी गति संसारकी । ज्यों गांडर की ठाट ॥
एक परा जो गाड में । सवै गाड में जात ॥२४०॥
मारग तो कठिन है । वहां कोई मत जाय ॥
गये ते वहुरे नहीं । कुशल कहै को आय ॥२४१॥
मारी मरे कुसंग की । केरा साथे बेर ॥
वे हालैं वे चींधरे । विधिने संग निवेर ॥२४२॥
केरा तवहिं न चेतिया । जव ढिग लागी बेर ॥
अवके चेते क्या भया । जव कांटन लीन्हा घेर २४३
जीव मर्म जाने नहीं । अंध भया सव जाय ॥
वादि द्वारे दाढ़ि न पावै । जन्म जन्म पछिताय २४४
जाको सतगुरु ना मिला । व्याकुल दहुँदिस धाय ॥
आंखिन सूझै वावरा । घरजरै घूर वुताय ॥२४५॥

गुणियातो गुणहि कहे । निर्गुणियागुणहिघिनाय॥
बैलहि दीजै जायफर । क्या बूझै क्या खाय २६३
अहिरहु तजि खसमहु तजी । विना दान्तकी ढोर ॥
मुक्ति परे विललात है । वृन्दावन की खोर ॥२६४॥
मुखकी मीठी जो कहे । हृदया है मति आन ॥
कहँहिं कबीर ता लोगसे । तैसहि राम सयान ॥२६५॥
इतते सब कोई गये । भार लदाय लदाय ॥
उतते कोई न आइया । जासो पूछिये धाय ॥२६६॥
भक्ति पियारी रामकी । जैसी पियारी आग ॥
सारा पट्टन जरिगुवा, बहुर ले आवे मांग ॥२६७॥
नारि कहावे पीवकी । रहे और संग सोय ॥
जार मीत हृदये बसे । खसम सुखी क्यों होय २६८
सज्जन से दुर्जन भया । सुनि काहू के बोल ॥
काँसा तामा होयरहा । हता ठिकोंका मोल २८६
विरहिन साजी आरती । दर्शन दीजे राम ॥
मूये दर्शन देहुगे । आवे कौने काम ॥२७०॥
पलमें परलय बीतिया । लोगहिं लागु तमारि ॥

आगलसोच निवारिके । पाछल करहु गोहारि २७१
एक समाना सकल में । सकल समाना ताहि ॥
कबीर समाना बूझमें । जहां दुतिया नाहिं २७२
एक साधे सब साधिया । सब साधेएक जाय ॥
जैसा सींचे मूलको । फूले फले अघाय ॥२७३॥
जेहि वन सिंह न संचरे । पंछी ना उड़ि जाय ॥
सो वन कबीर न हींडिया । शून्य समाधि लगाय २७४
सांच कहो तो है नहिं । झूठहिं लागु पियारि ॥
मो शिर ढारे ढेंकुली । सींचे और की क्यारि २७५
बोल तो अमोल है । जो कोई बोले जान ॥
हिये तराजू तौलिके । तब मुख बाहर आन ॥२७६॥
करु बहिया बल आपनी, छाड़ि बिरानी आस ॥
जाके आंगन नदिया बहे । सो कस मरे पियास २७७
वो तो वैसा ही हुआ । तू मत होहु अयान ॥
वो निर्गुणिया तै गुणवन्ता । मत एकहिं में सान ॥
जो मतवारे राम के । मगन होहिं मन माँहिं ॥
ज्यों दर्पण की सुन्दरी । गहे न आवे बाँहि २७९

वस्तू अंतै खोजे अंतै । क्यों कर आवै हाथ ॥
सज्जन सोई सराहिए । पारख राखे साथ ॥२४६॥
सुनिये सबकी वारता । निवेरिये अपनी ॥
सेंदुरे का सिंधौरा । झपनी की झपनी २४७
वाजन दे वाजंतरी । कल कुकुही मतिछेर ॥
तुझे विरानी क्या परी । अपनी आप निबेर २४८
गावे कथे विचारे नाहीं । अनजाने का दोहा ॥
कहहिंकवीरपारसपर्सेविन । (जस)पाहन भीतर लोहा॥
प्रथम एकजो हौं किया । भया सो बारह वान ॥
कसत कसौटी ना टिका । पीतर भया निदान २५०
कवीर न भक्त विगारिया । कंकर पत्थर धोय ॥
अंतर में विष राखि के । अमृत डारिनि खोय २५१
रही एक की भई अनेककी । विश्या बहुत भतारी ॥
कहहिंकवीरकाकेसंगजरि हैं। बहु पुरुपन की नारी ॥
तन बोहित मन काग है । लख जोजन उड़िजाय ॥
कवहिंकेभरमेअगमदरिया। कवहिं के गगन रहाय २५२
ज्ञान रतन की कोठरी । चुम्वक दीन्हों ताल ॥

पारखी आगे खोलिये । कूँजी बचन रसाल २५४
स्वर्ग पताल के बीच में । दुई तुमरिया विद्ध ।
षटदर्शन संशय परी । लख चौरासी सिद्ध २५५
सकलो दुर्मति दूरकरु । अच्छा जन्म बनाव ॥
कागगौन गति छाड़िके । हंस गौन चलिआव २५६
जैसी कहे करे जो तैसी । राग दोष निरुवारे ॥
तामें घटे बढ़े रतियो नहिं ।यहि विधि आपु सँवारे२५७
द्वारे तेरे राम जी । मिलहु कबीरा मोहिं ॥
तैं तो सबमें मिलि रहा । मैं न मिलूँगा तोहि२५८
भरम बढ़ा तिहुँलोक में । भरम मंडा सब ठांव ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । तुम बसेउ भरम के गाँव ॥
रतन अडाइनि रेत में । कंकर चुनि चुनि खाय ॥
कहहिं कबीर पुकारि के । ई पिंडे होहु कि जाय २६०
जेते पत्र बनस्पति । औ गंगा की रेन ॥२६०॥
पंडित विचारा क्या कहे । कबीर कही मुखबैन ॥
हौ जाना कुल हंस हौ । ताते कीन्हा संग ॥२६१॥
जो जानत बगु बावरा । छुवे न देतेउँ अंग ॥२६२॥

साधू होना चाहिये । पक्का है के खेल ॥
कच्चा सरसों पेरिके । खरी भया नहिं तेल २८०
सिंघों केरी खोलरी । मेढा पैठा धाय ॥
वानी ते पहिचानिये । शब्दहिं देत लखाय २८१
जेहि खोजत कल्पो गये । घटहिं माहिं सो मूर ॥
वाढी गर्भ गुमान ते । ताते परि गइ दूर॥२८२॥
दश द्वारे का पींजरा । तामें पंछी पौन ॥
रहिबे को आचरज है । जात अचंभौ कौन २८३
रामहिं सुमिरे रन भिरे । फिरे और की गैल ॥
मानुष केरी खोलरी । ओढे फिरत हैं बैल २८४
खेत भला बीज भला । बोय मुठीका फेर ॥
काहे विरवा रूखरा । ये गुण खेतहि केर २८५
गुरु सीढी ते ऊतरे । शब्द विमूखा होय ॥
ताको काल घसीटि हैं । राखि सकै नहिं कोय २८६
भुभुरिघाम बसे.घट माहीं । सबकोइबसेसोग कीछाहीं॥
जो मिला सो गुरुमिला । शिष्य न मिलिया कोय ॥
छौलाखछयानबेसहस्रमैनी । एक जीव पर होय ॥

जहँ गाहक तहँ हौनहीं । हौ तहँ गाहक नाहिं ॥
बिन विवेक भटकत फिरे । पकरिशब्द की छाहिं ॥
नग पषाण जग संकल है । पारख विरला कोय ॥
नगते उत्तम पारखी । जगमें बिरला होय ॥२६०॥
सपने सोया मानवा । खोलि जो देखे नैन ॥
जीव परा बहु लूट में । ना कुछ लेन न देन २६१
नष्टे का यह राज है । नफर का बरते तेज ॥
सार सब्द ठकसार है (कोई) हृदया माहिं बिवेक ॥
जबलग बोला तबलग ढोला । तौलों धन बेवहार ॥
ढोला फूटा बोला गया । कोइ न झांके द्वार ॥१६३॥
करं बन्दगी विवेक की । भेष धरे सब कोय ॥
सो वंदगी बहिजान दे (जहां) शब्द विवेक न होय ॥
सुर नर मुनि औ देवता । सात दीप नौखंड ॥
कहहिं कबीर सब भोगिया । देह धरेको दंड ॥२६५॥
जबलग दिलपर दिलनहीं । तबलग सबसुख नाहिं ॥
चारिउ युगन्न पुकारिया । सो संशय दिलमाहिं.२६६
जंत्र बजावत हौं सुना । टूटि गया सब तार ॥

जंत्रविचारा क्या करे । जब गया बजावनहार २६७
जो तू चाहे मुझको । छाँड सकलकी आस ॥
मुझही ऐसा होय रहो । सबसुख तेरे पास ॥२६८॥
साधुभयातो क्या भया । बोले नाहिं बिचार ॥
हतैंपराई आतमा । जीभ बांधि तरवार ॥२६६॥
हंसाके घटभीतरे । बसे सरोवर खोट ॥
चले गांव जहवां नहीं । तहाँ उठावन कोट ॥३००॥
मधुर बचन है औषधी । कटुक बचन है तीर ॥
श्रवणद्वार ह्वै संचरे । सालै सकल शरीर ॥३०१॥
दादेस देखो मरजीवको । धाय जुरि पैठि पताल ॥
जीव अटक माने नहीं । लेगहि निकरा लाल ३०२
ई जग तो जहँडे गया । भया योगना भोग ॥
तिल झारि कबीरा लिया । तिलैठी झारें लोग ॥३०३॥
ये मरजीवा अमृत पीवा । क्या धसि मरसि पतार ॥
गुरुकीदया साधुकी संगति । निकरिआव गहिद्वार३०४
केतेहि बुंद हलफो गये । केते गये बिगोय ॥
एक बुंदके कारने । मानुष काहेक रोय॥३०५॥

आगि जो लागि समुद्र में। टूटि टूटि खसे झोल ॥
रोवे कबीरा डम्फिया। मोरु हीरा जर अमोल २०६
छौ दर्शनमें जो परवाना। तासु नाम बनवारी ॥
कहहिंकबीरसब खलकसयाना। इन्हमेंहमहिंअनारी२०७
सांचे श्राप न लागे। सांचे काल न खाय ॥
सांचहि सांचा जो चले। ताको काह नसाय २०८
पूरा साहेब सेइये। सब विधि पूरा होय ॥
ओछेसे नेह लगाय के। मूलहु आवे खोय ॥२०९॥
जाहु वैद घर आपने। यहां बात न पूछे कोय ॥
जिन्ह यह भार लदाइया। निरबाहेगा सोय ॥२१०॥
औरन के सिखलावते। मोहडे परि गो रेत ॥
रास बिरानी राखते। खाइनि घरका खेत ॥२११॥
में चितवत हों तोहि को। तू चितवत है वोहिं ॥
कहहि कबीर कैसे बनिहैं। मोहिं तोहिं औ वोहिं २१२
तकत तकावत तकि रहे। सके न बेझा मार ॥
सबै तीर खाली परा। चला कमानहिं डार २१३॥
जस कथनी तस करनी। जस चुम्बक तस ज्ञान ॥

कहँहिं कबीर चुम्बक विना। क्यों जीते संग्राम ३१४
अपनी कहै मेरी सुने। सुनि मिलि एकै होय॥
हमरे देखत जग जात है। ऐसा मिला न कोय ३१५
देश विदेशे हौं फिरा। गांव गांव की खोरि॥
ऐसा जियरा ना मिला। लेवे फटक पछोरि॥३१६॥
मैं चितवत हौं तोहिको। तू चितवत कछु और॥
लानत ऐसे चित्तपर। एक चित्त दुइ ठौर॥३१७॥
चुम्बक लोहे प्रीति है। लोहे लेत उठाय॥
ऐसा शब्द कबीर का। काल से लेत छुड़ाय ३१८
भूला तो भूला। बहुरि के चेतना॥
विसमय की छूरी। संशय का रेतना॥३१९॥
दोहरा कथि कहै कबीर। प्रति दिन समय जो देखि॥
मुये गये नहीं बाहुरे। बहुरि न आये फेरि ३२०
गुरु विचारा क्या करे। शिष्यहि मांहे चूक॥
भावे त्यों परबोधिये। बांस बजाये फूक॥३२१॥
दादा भाई बापके लेखो। चरणन होइहौं बंदा॥
अबकी पुरिया जो निरुवारे। सोजन सदाअनंदा॥

सबते लघुता ई भली । लघुता से सब होय ॥
जस दुतिया को चन्द्रमा । शीस नवे सब कोय ३२३
मरते मरते जग मुवा । मुये न जाना कोय ॥
ऐसा होयके ना मुवा । बहुरि न मरना होय ३२४
मरते मरते जग मुवा । बहुरि न किया विचार ॥
एक सयानी आपनी । परबस मुवा संसार ॥३२५॥
शब्द है गाहक नहीं । वस्तु है महँगे मोल ॥
बिना दाम काम न आवे । फिरे सो डामा डोल ३२६
गृह तजिके योगी भये । योगी के गृह नाहिं ॥
बिन विवेक भटकत फिरे । पकरिशब्द की छाहिं ३२८
सिंह अकेला बन रमे । पलक पकल करै दौर ॥
जैसा बन है आपना । वैसा बनहै और ॥३२८॥
पैठाहै घट भीतरे । बैठा है साचेत ॥
जब जैसी गति चाहे । तब तैसी मति देत ३२९
बोलतही पहिचानिये । साहु चोरका घाट ॥
अंतर घटकी करनी । निकरे मुखकी बाट ३३०
दिलकामहरमकोईनमिलिया । जोमिलियासोगर्जी ॥

कहहिंकवीर असमानहिंफाटा । क्योंकरसीवेदर्जी
ई जग जरत देखिया । अपनी अपनी
ऐसा कोई न मिला । जासो रहिये ल ... ।।
वन वनाया मानवा । विना बुद्धि वेतूल
कहा लाल ले कीजिये । विना वासका फूल ।।३३-
सांच वरावर तप नहीं । झूठ वरावर पाप
जाके हृदया सांच है । ताके हृदया आप ।।३३४।।
कारे वड़े कुल ऊपजे । जोरे वड़ी बुद्धि नाहिं ।।
जैसा फूल उजारिका । मिथ्या लगि झरजाहिं ३३५
कर्ते किया न विधि किया । रविशशी परी न दृष्टि ।।
तीन लोक में न नहीं । जाने सकलो सृष्टि ३३६
सुरहुर पेड अगाध फल । पंछी मरियो झूर ।।
वहुत जतनके खोजिया । फल मीठा पै दूर ।।३३७।।
वैठा रहे सो वानिया । ठाढ़ रहे सो ग्वाल ।।
जागत रहे सो पहरुवा । तेहि धरिखायो काल ३३८
आगे आगे दौ जरे । पाछे हरियर होय ।।
वलिहारी तेहि वृक्षको । ... सल ... ३३९

जन्म मरण बालापन। चौथे वृद्ध अवस्था आय॥
जसमूसाको तके बिलाई।असयमजीवघातलगाय२४०
है बिगरायल वोरका। बिगरो नाहिं बिगारो॥
घावकाहिपर घालो। जितदेखों तित प्राणहमारो२४१
पारस परसे कंचन भौ। पारस कधी न होय॥
पारस के अरस परसते। सुवर्ण कहावे सोय २४२
ढूँढन ढूँढत ढूंढिया। भया सो गुना गून॥
ढूँढन ढूँढन ना मिलो। तबहारी कहा बेचून २४३
बेचून जग चूनिया। साईं नूर निन्यार॥
आखिर ताके बखत में। किसका करो दीदार २४४
सोई नूर दिल पाक है। सोई नूर पहिचान॥
जाके किए जग हुवा। सो बेचून क्यों जान २४५
ब्रह्मा पूछे जननि से। करजोरि शीस नवाय॥
कौनवर्ण वह पुरुष है। माताकहु समुझाय २४६
रेप रूप वै है नहीं। अधर धरीं नहिं देहु॥
गगन मंडल के मध्य में। निरखो पुरुष विदेह २४७
धरे ध्यान गगनके माहिं। लाये वज्र किवाँर॥

कहहिंकबीर असमानहिंफाटा । क्योंकरसींवेदर्जी ३३१
ई जग जरत देखिया । अपनी अपनी आगि ॥
ऐसा कोई न मिला । जासो रहिये लागि॥३३२॥
बन बनाया मानवा । बिना बुद्धि बैतूल ॥
कहा लाल ले कीजिये । बिना बासका फूल ॥३३३॥
सांच बराबर तप नहीं । झूठ बराबर पाप ॥
जाके हृदया सांच है । ताके हृदया आप ॥३३४॥
कारे बड़े कुल ऊपजे । जोरे बड़ी बुद्धि नाहिं ॥
जैसा फूल उजारिका । मिथ्या लागि झरजाहिं ३३५
कर्ते किया न विधि किया । रविशशी परी न दृष्टि ॥
तीन लोक में न नहीं । जाने सकलो सृष्टि ३३६
सुरहुर पेड अगाध फल । पंछी मरियो झूर ॥
बहुत जतनके खोजिया । फल मीठा पै दूर ॥३३७॥
बैठा रहे सो बानिया । ठाढ़ रहे सो ग्वाल ॥
जागत रहे सो पहरुवा । तेहि धरिखायो काल ३३८
आगे आगे दौ जरे । पाछे हरियर होय ॥
बलिहारी तेहि वृक्षको । जर काटे सल होय ३३९

जन्म मरण बालापन । चौथे वृद्ध अवस्था आय ॥
जसमूसाको तके बिलाई । असयमजीवघातलगाय२४०
है बिगरायल वोरका । बिगरो नाहिं बिगारो ॥
घावकाहिपर घालो । जितदेखों तित प्राण हमारो३४१
पारस परसे कंचन भौ । पारस कधी न होय ॥
पारस के अरस परसते । सुवर्ण कहावे सोय ३४२
ढूँढत ढूँढत ढूढिया । भया सो गुना गून ॥
ढूँढत ढूँढत ना मिलो । तबहारी कहा बेचून ३४३
बेचून जग चूनिया । साईं नूर निन्यार ॥
आखिर ताके बखत में । किसका करो दीदार ३४४
सोई नूर दिल पाक है । सोई नूर पहिचान ॥
जाके किए जग हुवा । सो बेचून क्यों जान ३४५
ब्रह्मा पूछे जननि से । करजोरि शीस नवाय ॥
कौनवर्ण वह पुरुष है । माताकहु समुझाय ३४६
रेप रूप वै है नहीं । अधर धरी नहिं देहु ॥
गगन मंडल के मध्य में । निरखो पुरुष विदेह ३४७
धरे ध्यान गगनके माहिं । लाये बज्र किवाँर ॥

देखि प्रतिमा आपनी । तीनिउँ भये निहाय २४८

ये मन तो शीतल भया । जब उपजा ब्रह्मज्ञान ॥
जेहि बसंदर जगजरे । सो पुनि उदक समान २४९

जागे नाता आदिका । बिसरि गयो सो ठौर ॥
चौरासी के बसि परे । कहे और की और २५०

अलखलखौं अलखेलखौं । लखौं निरंजन तोहिं ॥
हौं कबीर सबको लखौं । मोको लखे न काहि २५१

हमतो लखा तिहुँलोक में । तू क्यों कहे अलेख ॥
सारशब्द जाना नहीं । धोखे पहिरा भेख ॥२५२॥

साखी आँखी ज्ञानकी । समुझि देखु मनमाहीं ॥
बिनु साखी संसार का । झगरा छूटत नाहिं॥२५३॥

इति बीजक मूल ग्रन्थ समाप्त ।

पं०श्रीलाल उपाध्याय द्वारा श्रीविश्वेश्वर प्रेस, काशी में मुद्रित ।